❀ कलौ तद्धरिकीर्तनात् ❀

शब्द सदाचार संग्रह

प्रकाशकः—

भूमानन्द ब्रह्मचारी

श्रीभगवद्भक्ति आश्रम रामपुरा रेवाड़ी।

तृतीयावृत्ति २०००	सम्वत् १९९३	मूल्य ≡)

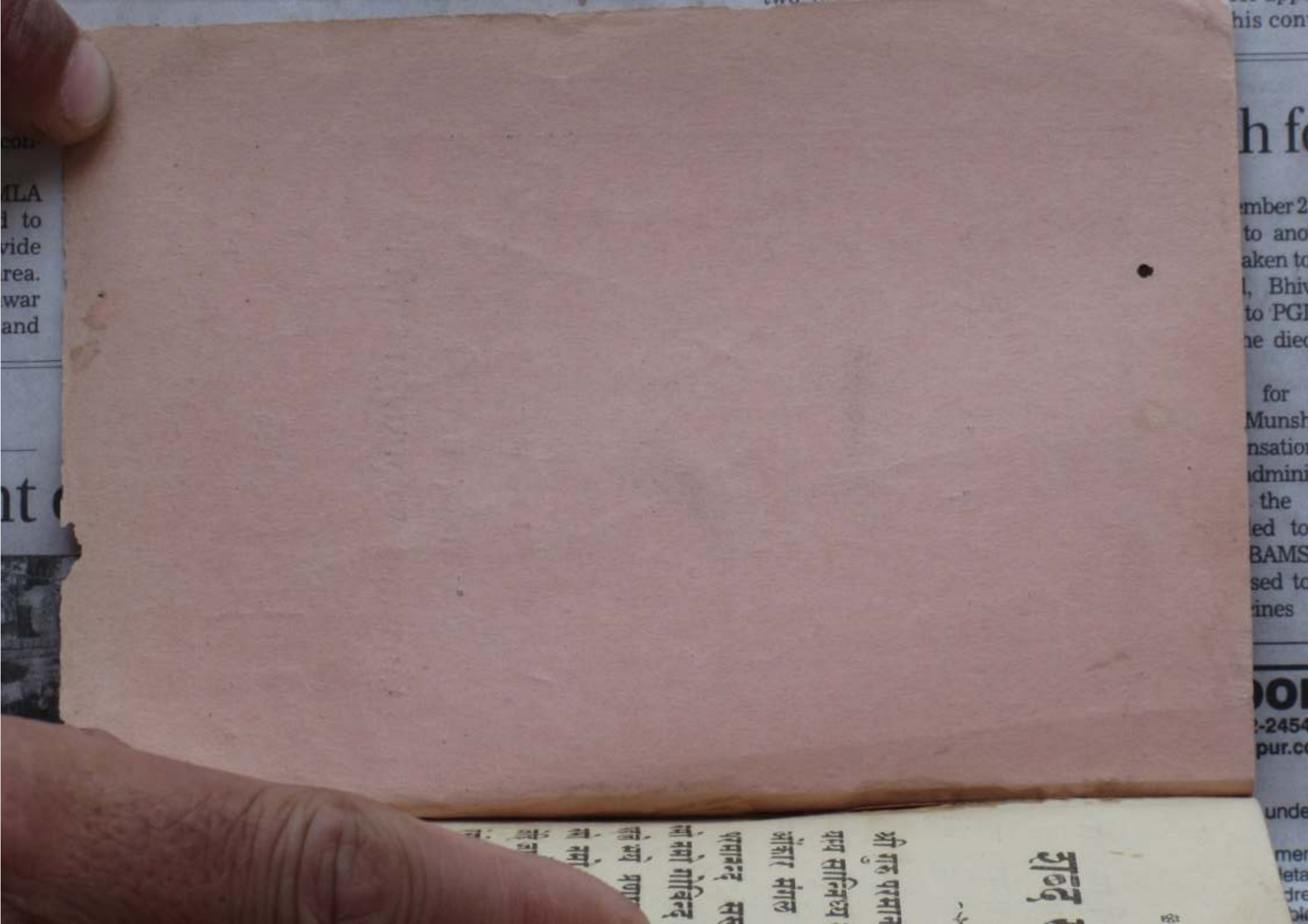

❀ श्री कृष्णाय नमः ❀

शब्द सदाचार संग्रह

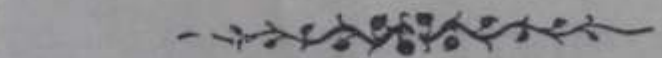

श्री गुरु परमानन्दं बन्दे स्वानन्द बिग्रहम् ।
यस्य सान्निध्य मात्रेण चिदानन्दायते तनुः ॥
ओंकार मंगल सदा विनवौं बारम्बार ।
परमानन्द सरूपं निज ज्ञानं दातार ॥
नमो नमो गोविन्द गुरु विनवों अभिजन सोय ।
पहले भये प्रणाम तिन नमो जो आगे होय ॥
नमो नमो श्री राम जू सत् चित् आनन्द रूप ।
जेहि जानै जग स्वप्नवत नाशत भ्रम तम कूप ॥
ऐसो देहु उदारता करि करुणा प्रभु मोहि ।
सबकूं देखूं एक सम कभी न भूलूं तोहि ॥
नारायण दो बात को दीजै सदा विसार ।
करी बुराई और ने आप कियो उपकार ॥
दो बातन को भूल मति जो चाहे कल्यान ।
नारायन इक मौत को दूजे श्री भगवान् ॥

तुलसी बिलम्ब न कीजिये भजिये राम सुजान।
जगत् मंजरी देत है क्यों राखैं भगवान्॥
राम झरोका बैठ कर सब का मुजरा लेय।
जैसी जाकी चाकरी वैसा ही फल देय॥
तुलसी या संसार में पांच रत्न हैं सार।
सन्त मिलन अरु हरि भजन दया दीन उपकार॥
तुलसी या संसार में कर लीजे दो काम।
देने को टुकड़ा भला लेने को हरि नाम॥
दुर्बल को न सताइये मोटी जाकी हाय।
बिना श्वास की खाल ते लोह भस्म हो जाय॥
भजन करो मन वश करो यही बात है तन्त।
काहे को पढ़ पढ़ मरो कोटिन ज्ञान ग्रन्थ॥
ज्ञानी सोऽहं कहत हैं योगी जन ओंकार।
भगत राम को भजत हैं साधो करो विचार॥
दादू सिरजन हार के केते नाम अनन्त।
मन आवै सोइ लीजिये वा साधू सुमरे सन्त॥
सुन्दर मानुष देह की महिमा बर्णे साध।
तामें वश कर पाइये पूर्ण ब्रह्म अगाध॥

श्वासों की कर सुमरणी अजपा का कर जाप।
ब्रह्म तत्व का ध्यान धर सोऽहं आपे आप॥

सवैया

अवधि अपार मम रूप ते तरंग तुल्य।
विधि हरि हर आदि जेते रूप धारी हैं॥
देव दैत्य पन्नग पिशाच चराचर जेते,
जहां लग जग जाल माया ने पसारी है।
सब को अधार आप निराधार आतम सो,
सत् चित आनन्द स्वरूप तें सोन्यारी है॥
साक्षी एक सम रस व्यापक अकाशवत्,
पूर्ण प्रकाश ताहे बन्दना हमारी है॥
मति हीन विवेक बिना नर जो,
औरु साजि मतंग सो ईंधन ढोयो।
कंचन भाजन धूरी भरि नर,
मूढ़ सुधा रस से पग धोयो।
बेहित काग उड़ावन कारण,
लारि मणि मन मूर्ख रोयो।

ऐसे ही देह दुलभ्य बिना रस,
पाय अजान अकारथ खोयो ॥

गगन के मण्डल में चन्द्रमा मसालची किये,
लाख तारे वाके दीपक दरबार हैं ।
ब्रह्मा वज़ीर विष्णु कारदार शंकर दीवान,
जाके गणेश चोबदार हैं ।
शील हू की लक्ष्मी जो सदा अंग संग रहे,
कुबेर जैसे भण्डारी अरु इन्द्र जमींदार हैं ।
कहै अवधूत प्यारे समझ के विचार देखो,
राजान पति राजा महाराजा करतार हैं ॥

मात तुही गुरु तात तुही,
मम भ्रात तुही प्रभु धान्य भण्डारो ।
ईश तुही जगदीश तुही,
मम शीश तुही प्रभु राखन हारो ॥
राव तुही उमराव तुही,
मन भाव तुही मम नैन को तारो ।
सार तुही करतार तुही,

परिवार तुही घर वार हमारो ॥

मोर मुकुट वारो धरै भेष नटवारो,
छोटी लोल लट वारो जगत् उजारो है ।
सांवरे वर्ण वारो मुरली धरन वारो,
संकट हरन वारो नन्दजू को प्यारो है ॥
दानव दलन वारो छबि को छलन वारो,
मटक चलन वारो पोष उर धारो है ।
कंस को दलन वारो भृगुलता लच्छ वारो,
मोर पंख वारो रखवारो सो हमारो है ।

दास तो तिहारे जो उदास तो तिहारे,
दूर पास तो तिहारे आम खास तो तिहारे हैं
दीन तो तिहारे मति हीन तो तिहारे,
जो नवीन तो तिहारे प्राचीन तो तिहारे हैं ।
कूर तो तिहारे गुण पूर तो तिहारे,
राचे नूर तो तिहारे सांचे शूर तो तिहारे हैं
लायक तिहारे यश गायक तिहारे,
हो सहायक हमारे हम पायक तिहारे हैं ।

शब्द १

चरखले वाली तेरा चरखा बोले राम नाम भज तुही ॥
चरखा तेरा रंग रंगीला पीढ़ा लाल गुलाल ।
कातन वाली श्याम सुन्दरी मुड़ तुड़ घाले तार ॥१
बन जाई बन उपजी बन ही हमारो वास ।
एक अचम्भा मैं सुना बेटी ने जायो बाप ॥२
बेटी बोली बाप से अनजाया बर ला ।
अनजाया बर ना मिले हमरा तुमरा व्याह ॥३
ज्येठाणी मांढा रचा द्यौराणी के व्याह ।
नणदेइया चौरी चढ़ा देवरिया फेरे खाय ४
रुई पिनावन मैं गई सुन पीनन हारे बात ।
रोम रोम मेरा पीन दे मेरे सतगुरु का परताप ॥५
चरखा २ सब कहैं चरखा लखा न जाय ।
चरखा लखियादास कबीरा आवागमन मिट जाय ॥

शब्द २

चरखो चलता नाहीं रे मेरा चरखा हुआ पुराना ॥टेक
पग खूटा दोउ हिलने लागे बीच मण्डला ढलकाना
सभी पंखड़ियां पड़गई ढीली चलता नहीं मनमाना

नया चरखला रंगा चंगा सब का चित्त चुरावे ।
जब चरखे का रंग उतर गया देखा हूं ना भावे ॥
रसना तकली ऊबल खागई कहो कैसे कर छूटे ।
शब्द तार सीधा नहीं निकसे घड़ी घड़ी पै टूटे ॥
मोटी महीन कातलो कुडियां कर अपना सुलझेरा ।
कहैं कबीर सुनो भाई साधो चेतो क्यों न सवेरा ॥

शब्द ३

चरखा तोहीअ जब मिला तू तो कात सुहागन नार ॥
कारीगर ने घड़ा चरखला चौंसठ बन्ध लगाय ।
पूर्व जन्म से तोहे मिलयो है कातो न मन हर्षाय ॥
शील धर्म व्रत नेम खूंटड़ी सुन्दर ना हिल जाय ।
चित जतनी से बीस पंखड़ी चौकस बन्द लगाय ॥
मन माल है न त्याग बावरी मत की नाह कराय ।
तप तकला और दया दमड़का चरखा चित्त बनाय ॥
राम नाम की तार बांध ले सुरता मत गरभाय ।
शम्भुनाथ की नाव झोभरी सत्गुरु पार लगाय ॥

शब्द ४

चरखा हालन लागा सारा तैंने कैसी खराद उतारा ॥
कारीगर जहां घड़ने बैठा वहां घोर अंधियारा ।
ले औजार साल सब कीने मंझा ठीक समारा ॥
नौ दस मास में घड़ कर देता ना कुछ लेत बिचारा
बहत्तर जिस में छेकी कोठरी बीच रखा गलियारा ॥
ठोक ठोक तैयार किया जब पृथिवी बीच उतारा ।
चरखला वाली के मन भाया सबको लगा पियारा ॥
अन्त समय चर्खे की आई आया हुकम करारा ।
माधोदास कहत कर जोरी होगया न्यारा न्यारा ॥

शब्द ५

चरखा चलता है दिन रैन निकसै बागल सूत हजारी ।
निकसे तार पवन से पतला, धूंवां से अधिकारी ॥
जोबन बांध जुगत से काते ऐसी चातुर नारी ॥
राम नाम का गूंटा रोप्या सुरता माल पसारी ।
सभी पखड़ियां चलने लागी अपनी अपनी बारी ॥
तीन महल पर नौ दरवाजा तेरह महल पर वारी ॥
सोला महल पर चरखा चाले काते हर की प्यारी ॥

नाथ गुलाब मिले गुरुपूरे हरि चरणन बल हारी।
भानीनाथ शरण सतगुरु की गरुड़ चढे गिरधारी॥

शब्द ६

हमें रे कोई कातन देई सिखाय।
काते ननदिया काते जिठजिया कात परोसिन आय।
पौनी पांच पचीस रंग की हम से काता न जाय॥
ब्रह्मा काता बिष्णु काता नारद काता आय।
विश्वामित्र वशिष्ठ दोऊ काता तबहू न काता सिराय
तन के काते कहा भया जो, मन ही कात न जाय।
टिकवा साधन लो बनि आवे महगें मोल बिकाय॥
बाला काता तरुणा काता विरध काता न जाय।
कहै कबीर तीनों पन काता चरखा धरा उठाय॥

शब्द ७

दीनानाथ दयानिधि स्वामी,
कौन भांति मैं तुम्हें रिझाऊं।
श्री गंगा चरणों से निकसी,
शूचो नीर प्रभु कहां से लाऊं॥
कामधेनु कल्पवृक्ष तुम्हारे,

कौन सो पदार्थ भोग लगाऊं।
चार वेद तुम मुख से भाषे,
और कहा प्रभु पाठ सुनाऊं॥
अनहद बाजे बजत तुम्हारे,
ताल मृदंग क्या शंख बजाऊं॥
कोटि भानु थारे नख की शोभा,
दीपक ले प्रभु कहा दिखाऊं।
लक्ष्मी थारे चरणन की चेरी,
कौन द्रव्य प्रभु भेट चढ़ाऊं।
तुम तिरलोकी के करता हरता,
तुम्हें छोड़ प्रभु कौन पै जाऊं॥
सूरश्याम प्रभु विपत विडारन,
मन वांछित फल तुमही से पाऊं॥

शब्द ८

भजन बिन बावरे तैंने हीरा सा जन्म गंवाया॥
कभी न आया सन्त शरण में ना कभी हरि गुण गाया
बह २ मरा बैल की न्याईं सोय रहा उठ खाया॥
ये संसार हाठ बनियें की सब जग सौदा आया।

चातर माल चौगुना कीना मूर्ख मूल ठगाया ॥
यह संसार फूल संभल का सुवा देख लुभाया ।
मारी चौंच रुई निकस्याई मुण्डी धुन पछताया ॥
ये संसार माया का लोभी ममता महल चिनाया ।
कहत कबीर सुनो भाई साधो हाथ कछूना आया ॥

शब्द ९

मैं तेरा स्वामी मुझे ना दिल से भूल ॥ टेक ॥
तुही धरन में तुही गगन में तू मूलन का मूल ॥
तुही डार में तुही पात में तुही रंगीला फूल ॥
गोपीचन्द भरथरी राजा सिर में डारी मूल ॥
दास कबीर शरण तेरी आया होवे अर्ज कबूल ॥

शब्द १०

बंगला भला बना दरवेश जामें नारायण परवेश ॥
पांच तत्व की ईंट बनाई तीन गुणों का गारा ।
छत्तीसों की छात बना कर चिन गया चिनने हारा ॥
इस बंगले के दश दरवाजे बीच पवन का थंभा ।
आवत जावत कोऊ न जाने देखो बड़ा अचम्भा ॥
इस बंगले में चौपड़ मांडी खेलें पांच पचीस ।

कोई तो बाजी हार चला है कोई चला जुग जीत ॥
इस बंगले में पातर नाचे मनवा ताल लगावे ।
सुरत निरत के पहर घूंघरू राग छत्तीसों गावे ॥
कहें मछन्दर सुन बाले गोरख, जिन यह बंगला गाया
इस बंगले के गाने वाला बहुर जन्म नहीं आया ॥

शब्द ११

दाता एक राम भिखारी सारी दुनियां ॥ टेक ॥
राजा चढ़े रण धन दुर्जन धुनियां ।
समर समूह पै दोऊ ओर सुर मुनियां ॥ १ ॥
चोर चले चोरी करण ठग ठान ठनियां ।
साहूकार रोकड़ बांधें लाद चले बनियां ॥२ ॥
जोगी जती जोग साधें जपैं माला मनियां ।
अंजली पसार मांगे बहैं ज्ञानी गुनियां ॥ ३॥
कोई नाचै गावे कोई तोड़े तान तनियाँ ।
भजन भरोसे भीषण दास उन मुनियां ॥ ४॥

शब्द १२

सिया रघुबीर भरोसो ऐसो ॥ टेक ॥
वारि न बोरि सक्यो प्रहलादहि,

पावक नाहि जरयो सो ॥
हिरणा कुश बहु भांति सतायो,
हठ कर बैर करयो सो ॥
मारयो चाहे दास नर हरि को,
आपहि दुष्ट मरयो सो ॥ १ ॥
मीरां के मारन के कारण,
पठयो जहर खरयो सो ॥
राम कृपा तें अमृत ह्वैगयो,
हंस हंस पान करयो सो ॥ २ ॥
द्रुपद सुता को चोर दुःशासन,
राज सभा पकरयो सो ।
ऐंचत ऐंचत भुज बल हारे,
नेक न अंग उघरयो सो ॥ ३ ॥
भारत में भंवरी के अंडा,
कोटिन दल बटरयो सो ।
राम नाम जब पक्षि टेरयो,
घंटा टूट परयो सो ॥ ४ ॥
लंका जारि अंजनी नन्दन,

देखत पुर सगरयो सो।
ताके मध्य विभीषण को गृह,
राम कृपा उबरयो सो ॥ ५ ॥
रावण सभा कठिन प्रण अंगद,
हिय धर हरि सुमरयो सो।
मेघनाद सम कोटिन योधा,
लागे पग न टरयो सो ॥ ६ ॥
तुलसीदास विश्वास राम पद,
जो नर नारी करयो सो।
और प्रभाव कहां लग वरणौं,
जेहि यमराज डरयो सो ॥ ७ ॥

शब्द १३

यह ऋतु रूस रहन की नाहीं ॥ टेक ॥
वर्षत मेघ मेदिनी के हित प्रीतम हर्ष बढाई।
जो बेली ग्रीष्म ऋतु जरहिं ते तरवर लिपटाई ॥
उमड़ी नदी प्रेम रस माती सिन्धु मिलन को जाई।
सूरदास उठि चली राधिका दे दूती गल बाहीं ॥

शब्द १४

नाथ जू अब के मोय उभारो ॥ टेक ॥
पतितन में विख्यात पतित हूं पावन नाम तिहारो ।
बडे पतित नाहिन पासंग हूं अजामेल कौन विचारो ॥
भाज्यो नरक नाम सुनि मेरो यमने दियो हट तारो
क्षुद्र पतित तुम तारे रमापति अबन करो जियगारो ॥
सूरदास सांचो तब मानें जब होय मम निस्तारो ॥

शब्द १५

छबि दिखलाजा प्यारे मोहना,
मैंनू बंशी दी तान सुनाजा ॥ टेक ॥
तैंनूं ब्रजदीयां नारियां प्यारियां वे,
ओत्थे डूडियां कुब्बियां तारियां वे ।
कभी भुलल के पंजाब बिच आजा मोहना ॥ १ ॥
तैंनूं मेरी जेइयां बहतेरियां वे,
पर मैंनूं इक्क टंगा टेरियाँ वे ।
मेरी ततड़ दी प्यास बुझाजा मोहना २ ॥
तू घर आ मेरे ब्रज बासिया वे,
बन्दी तेरे दरश दी प्यासिया वे ।

ऐसी प्यासी नू पानी पिलाजा मोहना ॥ ३ ॥
मेरे ऐबों पै रुख ना दे साइयां वे,
मेरी माफ कर सब ही बुराइयां वे।
चरण दास नू पार लगा जा मोहना ॥ ४ ॥

शब्द १६

आजारे मोहन आजा लीला मय लीलादीखाजा ॥टेक
शुभ गीता का ज्ञान सुना जा,
कर्म वीर बनना बतला जा।
बीणा ध्वनि सुना जा ॥ १ ॥
अभिमानी का मान घटा जा,
निरंकुशों की शान घटा जा।
विमल ज्ञान भण्डार लुटा जा,
प्रेम पीयूष पिलाजा ॥ २ ॥
भारत को स्वातन्त्र्य दिला कर,
दास प्रथा का अंत करा कर।
मातृ भूमि को धीरज देकर,
कुछ तो दुख मिटाजा ॥ ३ ॥
भीख मांगना भारत छोड़े,

पाप कर्म से मुख को मोड़े।
सत्य धर्म से नाता जोड़े,
जीवन ज्योति जगा जा ॥ ४ ॥
गोकुल बृन्दाबन में आकर,
दधि माखन का चोर कहाकर।
दूध दही का स्रोत बहा कर,
ऊधम फेर मचा जा ॥ ५ ॥
वह प्राचीन उमंग नहीं है,
निर्मल प्रेम तरंग नहीं है।
सच्चा सुख दिखता नहीं है,
किंचित् दया दिखा जा ॥ ६ ॥
मांगें हम लक्ष्मी मत देना,
यश वैभव मांगें मत देना।
केवल मंजुल रूप दिखा कर,
किंचित् हृदय जुड़ा जा ॥ ७ ॥
माधव जो तू नहीं आवेगा,
इस प्रकार जो तरसावेगा।
निश्चय ही तू पछतावेगा,

प्रणयी नेह निभाजा ॥ ८ ॥

शब्द १७

पितु मात सहायक स्वामी सखा,
तुम ही इक नाथ हमारे हो।
जिन के कछु और अधार नहीं,
तिनके तुम ही रखवारे हो॥
प्रतिपाल करो सगरे जग
अतिशय करुणा उर धारे हो।
भूली हैं हम ही तुम को तुम तो.
हमरी सुधि नाहीं बिसारे हो॥
महाराज महा महिमा तुमरी,
समझे विरले बुध वारे हो।
शुभ शान्ति निकेतन प्रेम निधे,
मन मन्दिर के उजियारे हो।
यह जीवन के तुम जीवन हो,
इन प्राणन के तुम प्यारे हो॥

शब्द १८

अब मैं नाच्यो बहुत गोपाल ॥ टेक ॥
काम क्रोध को पहिर चोलना कण्ठ विषय की माल ॥
महामोह के नूपर बाजत निन्दा शब्द रसाल ॥
तृष्णा नाद करत घट भीतर नाना विधि के ताल ॥
माया को कटि फैंटा बांध्यो लोभ तिलक दियो भाल ॥
सूरदास की सभी अविद्या दूर करो नन्दलाल ॥

शब्द १६

चरखा परे हटा ले री मेरी सुरत राम से लागी ॥टेक
कैसे कातूं कातना उमर मेरी है काची ।
दोनों पैरुं बांध घूंघरू सत्गुरु आगे नाची ॥
काहे से कातूं कातना ना बोई लारै घाड़ी ।
हमें और की कहा पड़ी मैं आप ही फिरूं उघाड़ी ॥
चरखा छोड़ा पीढा छोड़ा छोड़ कातनी सूत ।
संग की सुहेली सगरी छोड़ी सगा सास का पूत ॥
मीरां माता से कहै सुन माता मेरी भागी ।
भजन करन से कुलउभरतहैभजनकरतबड़भागी ॥

शब्द २०

मेरा मन बनियांरे अपनी बान कभी ना छोड़े ॥टेक
हेर फेर के दोनों पलड़े, अन्दर काणी डाँडी।
मन में झूठ कपट हिरदे में, हाट चौसले मांडी॥
पूरे बाट परे सरकावे, कमती बाट टटोले।
पासंग मांही डांडी मारे, बेगा बेगा बोले॥
घर तेरे में कुबध किराड़ी, छिन छिन में चित चोरे।
कुनबा तेरा बड़ा हरामी, अमृत में बिष घोले॥
जल में तूही थल में तूही, घट घट में हरि बोले।
कहं कबीर सुनो भाई साधो, भरम बन्धा जग डोले॥

शब्द २१

लाडो मेंडुकी री तूतो पानी में की रानी ॥टेक॥
कव्वा तेरा भैया भतीजा चील तेरी दौरानी।
बुगला तेरा छोटा देवर बाय देखि मुसकानी॥
अन्धे ने मणिके को बींधा बिन अंगुली सुई चलानी।
बिन ग्रीवा के माला पहरी बिन जिह्वा के बाणी॥
चार चिरैंयां मंगल गावें टौंटा ताल बजावे।
सूतन पहर गधैया नाचे ऊंट बिसन पद गावे॥

कहै कबीर सुनो भाई साधो यह पद हैं निर्बाणी ।
जो इस पद की निन्दा करे है वाको नर्क निशानी ॥

शब्द २२

हो नाथ म्हारो कांई बिगरेगो नाथ जी ।
हो मेरे स्वामी लाजैगो बिरद तिहारो ॥टेक॥
ओरां के एक है मैं पांच पत्यां की नारि जी ।
उन पांचों नै त्याग दई हूं थे मत त्यागो बनवारी ॥
कैरू कपट रच्यो जर्जोधन मनमें यही तो बिचारी जी
नीत लिये पांचों पाण्डव छठी द्रौपदी नारी ॥
केशपकड़करल्यायोसभामेंत्रासतोदिखायोमोहेभारीजी
दुर्योधन बद नीत भयो है देखन चाहे उघारी ॥
अबतक नाथ मेरो कछु नहीं बिगर्यो द्रोपद दीन पुकारी
सहायकरोप्रभु थे भगताँ कीकहां गयो बेर तोहमारी
गद२ बैन नैन जल छायो कृष्ण ही कृष्ण पुकारी जी ।
फिर आवोगे लाज मरोगे दासी को देखोगे उघारी॥
सुन बिनती प्रभु आय गये तब नख पर गिरवरधारीजी
चीर में परवेस भयो है खैंचत खैंचत हारी ॥

महाभारतमें कथा लिखी है श्री वेदोव्यास जी उचारीजी
कहे कालूराम सुनो भाई धन्ना आ पहुंचे बनवारी ॥

शब्द ६

ऊधो कहत न कछु बन आये ॥ टेक ॥
सिर पर सौत हमारे कुबजा,
चाम के दाम चलावे ॥ १ ॥
उन कछु मन्त्र पढ्यो चन्दन में,
ताते श्याम ही भावे ॥ २ ॥
अपने रंग ही रंग्यो सांवरो,
शुक ज्यों बैठ पढावे ॥ ३ ॥
छांड्यो नेह हेत गोकुल स्यों,
लिख २ योग पठावे ॥ ४ ॥
बिसरेउ शेष असुर की दासी,
अब कुल बधु कहावे ॥ ५ ॥
ज्यों नटनी लघु हाथ लकुट लै,
कपि ज्यों नांच नचावे ॥ ६ ॥
सूरदास प्रभु जरी बहुत दुःख,
ता पर लौन लगावे ॥ ७ ॥

शब्द २४

सो नैना मेरे तुरिया तत पद अटके ॥ टेक ॥
सुरत निरत की गम नहीं सजनी जहां मिलन को लटके ॥
भूलो जगत बकत कछु ओरे वेद पुराणन ठटके ॥
प्रीति रीति की सार न जानै डोलत भटके भटके ॥
किरया कर्म भर्म उरझेरे ए माया के झटके ॥
ज्ञान ध्यान कछु पहुंचत नाहीं राम रहीमा फटकै ॥
जग कुल रीति लोक मर्यादा मानत नाहीं हटके ॥
चरणदास शुकदेव दयासों त्रैगुण तज के सटके ॥

शब्द २५

ऊधो अब नहीं श्याम हमारे ॥ टेक ॥
मधु बन बसत बदल से लीने माधो मधुप तिहारे ॥
इतने ही दूर भये कछु और हीं जो जोई मगु हारे ॥
कपटी कुटिल काक कोयल ज्यों अन्त भये उड़ न्यारे
रस ले भवर जाय स्वारथ हित प्रीतम चित न बिसारे
सूरदास तिन सैं का कहिये जे तन हुं मन कारे ॥

शब्द २६

ऊधो मन तो नहीं हैं दस बीस,
एक मन को लै गयो सांवरो कौन भजै जगदीश ॥टेक
भई अतिशिथिल सभी माधव बिन जैसे देहबिन शीश
श्वास अटक रहे आशा लगि जीवहू कोटि बरीस ॥
तुम तो सखा श्यामसुन्दर के सकल योग के ईस ॥
सूरदास रसिक की बतियां पुरवो मन जगदीश ॥

शब्द २७

टुक रंग महल में आव कि निर्गुण सेज बिछी ॥टेक॥
जहां पवन गवन नहिं होय जहां जाय सुरति बसी ।
जहं त्रयगुण बिन निर्वाण जहां नहीं सूर शशी ॥
जहं हिल मिल के सुखमान मुक्ति की होय हंसी ।
जहं पिय प्यारी मिलि एक कि आश दुई नशी ॥
जहं चरणदास गलतान कि शोभा अधिक लसी ॥

शब्द २८

सुन सुरत रंगीली हे कि हरिसा यार करो ॥ टेक ॥
जब छूटे विघ्न बिकार कि भव जल तुरत तरो ॥
तुम त्रयगुण छैल बिसारि गगन में ध्यान धरो ॥

रस अमृत पीवो हे कि विषया सकल हरी ॥
करि शील संतोष शृंगार छमा की मांग भरो ॥
अब पांचों तजि लगवार अमर घर पुरुष बरो ।
कहैं चरणदास गुरु देखि पिया के पाँव परो ॥

शब्द २६

तुही एक अनेक भयो है प्रभुजी अपनी इच्छा धार।
तूही सिरजे तूही पाले तूही करे संहार ॥
जित देखूं तित तूही तू है तेरा रूप अपार ॥
तूंही राम नारायण तूही तूही कृष्ण मुरार ।
साधों की रक्षा के कारण युग २ ले अवतार ॥
तुही आदि अरु मध्य तुही है अन्त तेरो उजियार ।
दानव देव तुमही से प्रकटे तीन लोक बिस्तार ॥
जल थल में व्यापक है तूही घट २ बोलन हार ।
तो बिन और कौन है ऐसो ज्यासों करूं पुकार ॥
तूही चतुर शिरोमणी है प्रभु तूही पतित उधार ।
चरणदास सुखदेव तुही है जीवन प्राण अधार ॥

प्रार्थना ३०

अयिविभो करुणेश स्वामिन् क्वस्थितोऽसि दयानिधे ॥
देहि निजपदपद्मभक्तिं तारयाशु भवाम्बुधे ॥
यादवाभिजनेन पूर्णे नाविता वसुधा त्वया ।
नाशिता शिशुपाल कंसजरासुताद्य सुरामृधे ॥
त्वद्वियोगमवाप्य भारत भूमिरधुना पीड़िता ।
पात्रता मुपयास्यतीश कदा तवानुग्रहविधे ॥

प्रार्थना ३१

हे विभो आनन्द सिन्धो मे च मेधा दीयताम् ।
यच्च दुरितं दीनबन्धो तच्च दूरं नीयताम् ॥
चञ्चलानि चेन्द्रियाणि मानसं मे पूयताम् ।
शरणं याचे तावकीनं सेवकः अनुगृह्यताम् ॥
त्वयि च वीर्यं विद्यते यत् तच्च मयि निधीयताम् ।
या च दुर्गुण दीनता मयि सातु शीघ्रं क्षीयताम् ॥
शौर्यं धैर्यं तैजसं च भारते चेक्रीयताम् ।
हे दयामय ! अयि अनादे ! प्रर्थना मम श्रूयताम् ॥

प्रार्थना ३२

भगवन् त्वदीय भक्तिं मनसा सदा स्मरेयम् ।
वेदोक्त धर्म कार्यं नक्तन्दिनं विधेयम् ॥ १ ॥
संगः सदा सुधीनां पन्थाश्च आर्याणाम् ।
सद्भावनामृषीणां स्वान्ते सदा भरेयम् ॥ २ ॥
रोगा हरिन्त देहं प्रबलाः शरीरमध्ये ।
ब्रह्मचर्यमौषधं च पेयं सदा वरेण्यम् ॥ ३ ॥
बालैरमूल्यबेला खेलासु नापनेया ।
ज्ञानं सदा दरेयं धर्मं सदा चरेयम् ॥ ४ ॥

गीतिका ३३

वन्दे मुकुन्द देवं धृतयादवेन्द्र देवम् ॥ १ ॥
जनकेन कंस भ्यतो नीतं तु गोपगेहम् ॥ २ ॥
खलधेनुकावकारिं व्योमासुरादि कालम् ॥ ३ ॥
बंशी विभूषितोष्ठं हृन्मानसे मरालम् ॥ ४ ॥

गीतिका ३४

भगवन्तमनन्तमजं भजरे,
मनसा विषयेषु रतिं त्यजरे ॥ टेक ॥
सुतदारधनादि विहाय चलं ।

गुरुमात्मविदं शरणं व्रज रे ॥ १ ॥
शृणु शास्त्र रहस्य कथा विमला ।
हृदये गत मोहमलं सृजरे ॥ २ ॥
निखिलं जगदेतदवेहि मृषा ।
परमात्मनि नित्य मतिं सृजरे ॥ ३ ॥
परिहाय मनोभ्रमजालमिदं ।
हरिमेकमुदारमतिं यजरे ॥ ४ ॥

शब्द ३५

श्याम का संदेशा ऊधो पाती लेके आयो री ॥टेक॥
पाती तो उठाय लीनी छाती सौं लगाय लीनी ।
घूंघट की ओट देके ऊधो समझायो री ॥
बसती उजाड़ी दीनी उजड़ बसाय लीनी ।
कुब्जा पटरानी कीनी मोहे ना सुहायो री ॥
सूर श्याम जू के आगे ऐसे जाय कहियो ऊधो ।
जीवत खसम किन भसम रमायो री ॥
कहा करूं सुनो यह गोकुल हरि बिन न सुहायोरी
सूरदास प्रभु कौन चूकते श्याम सुरत बिसरायोरी ।

शब्द ३६

जिसको तू नर तन मानत यह आप रूप भगवान है
अहंकार ने जब से घेरा कहन लगा मेरा और तेरा
भूल गया निज रूप अनेरा तू सर्वज्ञ सुजान है ॥
मैं हूं देह देह है मेरी केवल यही भूल है तेरी ।
पांच तत्व की यह तो ढेरी जान क्यों भया अजान है
बुरी भली करणी जब करि है बन्धनमें तभी तो परि है
निष्क्रिय को नहीं कछु डर है तोहे कर्म की आन है ॥
सत् चित् आनन्द भाव संभारो पांच कोशतेहोजान्यारो
नाम रूप कछु नाहिं निहारो यही तो निर्मल ज्ञान है ॥

शब्द ३७

बाणा बदलै सौ सौ बार बदले बाण तो बेड़ा पार ॥
सोना चांदी चौंच मंढाई किया हंस की लार ।
काका बाण कुबाण न छोड़े इत सत्संग लाचार ॥
युग युग सींचो दूध अरंड को लागैं नाहिं अनार ।
चूर चूर कर डारो चन्दन तजै नहीं महकार ॥
सज्जन के मुख अमी बसत है जब बोले तब प्यार
दुर्जन का मुख बन्द कर रखियो भट्ठी भरे अंगार ॥

अपनी करनी आप कहत हूं नहीं और सिर भार।
शम्भुदास वा घड़ी धन्य जब सुमरचा सिरजन हार

शब्द ३८

पिया आन मिले फागन में मेरे पूर्ण पिछले भाग री।
जो पिया पाग रंगेंगे रंग में मैं भी चीर रंगूंगी संग में,
दोनों रंग लें एक ही रंग में धब्बा रहे ना दागरी।
है जाऊं निरदागन मैं ॥ १ ॥

अतर गुलाल ज्ञान की रोली फैंकत हैं पिया भर२झोरी
सुनलो री मेरे संग की सुहेली सोवन में दो आगरी।
कछु नफा मिलै जागन में ॥ २ ॥

ताल मृदंग पखावज बाजै तत्व तमूरा सुर में गाजै।
मोहन के मुख मुरली साजै गावै छतीसों राग री।
सुन हो जाऊं बैरागन मैं ॥ ३ ॥

फागन के दिन सुख से बीते हमहारी म्हारे बालम जीते
गंगादास कहै हम भी बीते खेल चुके हैं फाग री।
कहां करें हंस कागन में ॥ ४ ॥

शब्द ३६

हरि को सुमर संकट हरण ॥ टेक ॥

कोटि कष्ट निवार तारण जगपति पोषण भरण ।
भक्ति पूर्ण देखि निश्चल अननव बांधो परण ॥
अग्नि में प्रहलाद राखो दियो नाहिं जरन ।
गिरि शिखिर से डारि दीन्हों लागो करुणा करन ॥
दीन जानि संभार लीन्हों कियो ठाढो धरन ।
खम्भ बांधो खड्ग काढो दुष्ट लागो अरन ॥
अब बता तेरो राम कित है गहो बाकी शरन ।
ढीठ हो प्रहलाद भाष्यो डारि शंका डरन ॥
मोमे तोमे खड्ग खम्भ में मध्य नारि नरन ।
खम्भ फाड़ कर भये प्रकट धरयो नरसिंह वरन ।
मोहिं गुरु शुकदेव कहिया सेव सोई चरन ।
चरणदास उपसना दृढ़ होय तारण तरन ॥

शब्द ४०

कृष्ण खड़े आंगन में कैसे सोय रही बृजनार ॥
जिस मोहन पर फिरे दीवानी मेरी सुनी न मनकी मानी
वह आये हैं सो हम जानी खड़े पुकारैं द्वार ॥

सोऽहं सोऽहं धूम मचाई पड़ा गजब नहीं देत सुनाई
श्याम सुन्दर हैं राम हाई टेरत भई बड़ी बार ॥
चाल अनोखी चितवन बांकी रसभरे नैन मनोहरझांकी
जग मग ज्योति जरे नयनों की खिल रही अजब बहार
सेज बिछी है शून्य अटारीउठ शृंगार कर निर्भय प्यारी
परमानन्द हो खोल किवाड़ो क्यों बैठी मन मार ॥

शब्द ४१

दलाली लालन की म्हारे सत्गुरु दई है बताय ॥टेक॥
लाल लाल सब कोई कहें रे सबकी गठरी लाल ।
खोल गांठ देख्यो नहीं या विधि रह्यो है कंगाल ॥
दिल्ली के बाजार में लाल ही लाल बिकांय ।
सुगरे सुगरे सौदा करते नुगरे न लियो उठाय ॥
ज्यों महंदी के पात में रे लाली रही समाय ।
कहैं कबीर सुनो भाई साधो आवागमन मिटजाय ॥

शब्द ४२

अलख संग मिलियो रे तुम चलो दिवाने देश ॥टेक॥
सन्त सदा उपदेश बतावें घट अन्दर दीदार लखावें ।
तन मन अर्पण करियो रे ॥ १ ॥

पहले पहर सुघर नर जागे चार चौक अनहद से आगे
अब चल कबहु न चलियोरे ॥ २ ॥
शब्द विहंगम बाजैं तूरा कोटि भानु जहां झलके नूरा
बंक नाल सुध करियो रे ॥ ३ ॥
सुखमन देश विहंगम सेरी माया गस्त फिरे चहुं फेरी
भरम भूल मत रहियो रे ॥ ४ ॥
इस पदका कोई भेद निहारे कहै कबीर रैदास विचारे
नाम को व्योहारी कोई मिलियो रे ॥५॥

शब्द ४३

मेरे मन राम को नाम अधारा ॥ टेक ॥
शिव सनकादि आदि ब्रह्मादिक, निशदिन करत विचारा
जाके जपत कटत दुःख दारुण, उतर जात भव पारा ॥
शवरी गीध अजामिल से खल, तिनहूं को प्रभुतारा ॥
प्रेम लाय जो ध्यान लगावे, सो पावे सुख सारा ॥
जिनजिन शरण लीन संकट में, तिनको आप सुधारा
आयो तव पदशरण नाथ मैं, औगुण अमित अपारा ॥
गिरिधर पार उतारो मोको, लै हौं नाम तुम्हारा ॥

शब्द ४४

साधो गोबिन्द के गुण गावो ॥ टेक ॥

मानुष जन्म अमोलक पायो, विरथा काहे गंवावो ॥
पतित पुनीत दीन बान्धव हरि, शरण ताहि तुम आओ
गजकी त्रास मिटी जेहि सुमिरत, तुम काहे बिसरावो
तज अभिमान मोह माया पुनि, भजन राम चित्त लावो
नानक कहत मुक्ति पथ एही, गुरु मुख होयतुम पावो ॥

शब्द ४५

मैं वारी जाऊं सत्गुरु के मेरा किया भरम सब दूर
चन्द चढा सब आलम देखे, मैं देखूं भ्रम दूर ।
हुवा प्रकाश आश गई दूजी, उगिया निर्मल नूर ॥
माया मोह तिमिर सब नाशा, पाया हाल हजूर ।
विषय विकार लार हैं जेता, जार किया सब धूर ॥
पिया प्याला सुधबुध बिसरी होगया चकना चूर ।
हुवा अमर मरै नहीं कबहू, पायो जीवन मूर ॥
बन्धन कटा छुटिया जमसे, किया दर्श मंजूर ।
ममता गई भई उर समता, दुख सुख डारा दूर ॥

समझै! बनै कहे नहीं आवे, भयो आनन्द भरपूर ।
कहै कबीर सुनो भाई साधो, बजिया निर्मल तूर ॥

शब्द ४६

भीजै चुनरिया प्रेस रस बून्दन ॥
आरत साज के चली है सुहागिन, पी अपने को ढूंढन
काहेकी तोरी बनीहै चुनरिया काहेके लगे चारों फून्दन
पांच तत्व की बनी है चुनरिया नाम के लागे फूदन
चढ़के महल खुलगयेरे किवरवा, दास कबीर लागे झूलन

शब्द ४७

गगन की ओट निशाना है ॥
दहिने सूर चन्द्रमा बांये, तिन के बीच छिपाना है ॥
तनकी कमान सुरत का रोदा, शब्द बाण लेताना है ॥
मारत बाण बिन्धा तनही तन, सत्गुरुका परवाना है
मारयो बाण घाव नहीं तनमें, जिन लागातिनजाना है
कहै कबीर सुनोभाई साधो, जिन जाना तिन माना है

शब्द ४८

भक्ति का मार्ग झीना रे ॥
नहीं अचाह नहीं चाहनारे, चरणन में लौलीनारे ॥

साध के सत्संग में रहे रे निशदिन मन भीना रे ।
शब्द में सुरत ऐसे बसे, जैसे जल मीना रे ॥
मान मानी को यों तजे, जैसे तेली पीना रे ।
दया क्षमा सन्तोष गहि, रहे अति आधीना रे ॥
परमारथ में देत सिर, कुछ बिलम्ब न कीना रे ।
कहै कबीर मत भक्ति का, प्रगट कह दीना रे ॥

शब्द ४६

रहना नहिं देश बिगना ॥

यह संसार कागद की पुड़िया, बून्द पड़े घुल जाना है
यह संसार कांटे की बाड़ी उलझ पुलझ मर जाना है
यह संसार झाड़ औ झांकर आग लगे बल जाना है
कहत कबीर सुनो भाई साधो सत्गुर नाम ठिकाना है

शब्द ५०

मारग विहंग बतावें सन्त जन ॥

कौने घर से जीव की उत्पत्ति कौने घर को जावे ।
कहां जाय जीव परलय होयगा सो सुर तहां चढ़ावे
गढ़ सुमरे बाही को कहिये, सुई नखा से जावे ।
भूमण्डल से परिचय करले, पर्वत धौल लखावे ॥

द्वादश कोस सहिब का डेरा, तहां सुरत ठहरावे।
वाको रंग रूप नहीं रखा, कौन पुरुष गुणगावे॥
कहे कबीर सुनो भाई साधो, जो यह पद लखिपावे
अमरलोक में झूले हिंडोला, सतगुरु शब्द सुनावे॥

शब्द ५१

मन को न तोल्यो तो का तोल्यो बनियां॥
काहे की पूंजी काहे का सौदा, काहे की लेके दुकनियां
काहेकी डांडो काहेका पलरा, काहेकी मारो डडनियां
कर्म की पूंजी धर्म का सौदा, चितकी लेके दुकनियां
या तन के जो डांडी पलरा, प्रेम की मारे डडनियां॥
काया नगर के हाथ में रे, ऊंची लेके दुकनियां॥
कहै कबीर सुनौ भाई साधो, छांड दे तन की लदनियां

शब्द ५२

अवधू बेगम देश हमरा॥
राजा रंक फकीर बादशाह, सब से कहूं पुकारा॥
जो तुम चाहत अहो परमपद, बसि हौ देश हमारा
जो तुम आये झीने होके, तजौ मनी को भारा॥
ऐसी रहनी रहो रे गोरख सहज उतर जाव पारा

नासत्य म की हैं महताबें, साहिब के दरबार। ॥
बचना चाहो कठिन काल से, गहो शब्द टकसारा ॥
कहैं कबीर सुनौ हो गोरख, सत्य नाम है सारा ॥

शब्द ५३

अब से खबरदार रहो भाई ॥

सत्गुर दीना माल खजाना, राखो जुगत लगाई ॥
पाव रती घटने नहीं पावे दिन२ बढै सवाई ॥
क्षिमा शीलकी अलफी पहिने, जगत लंगोट लगाई
दया की टोपी सिरपर देके, और अधिक बनआई ॥
वस्तु पाय गाफिल मत रहना, निशदिन करौ कमाई
घट के भीतर चोर लगतु हैं, बैठे घात लगाई ॥
तन बन्दूक सुमति का सिंगरा, प्रीत कागज दहकाई
सुरत पलीता हर दम सुलगै, कस पर राख चढ़ाई
बाहर वाला खड़ा सिपाई, ज्ञान गम्म अधिकाई।
साहिब कबीर आदि के अदली, हरदम लेत जगाई

शब्द ५४

हंसा हंस मिले सुख होई ॥
यहां तो पातीहैं बगुलन की, कदर न जाने कोई ।
जो हंसा तोरे प्यास क्षीर की, कूप नीर नहीं होई ॥
यह तो नीर सकल ममता को, हंस तजा जस चोई ।
षटदर्शन पाखण्ड छानवैं, भेष धरे सब कोई ॥
चार बर्ण और वेद किताबैं, हंस निराला होई ।
कहै कबीर प्रतीत मानलै, छिव नहीं छाय बिगोई ।
लै बैठारो अमर लोक में आवा गमन न होई ॥

शब्द ५५

आपनो क्यों न सम्भारै काजा ।
आपन काहे न सम्भारै काजा ॥
ना गुरुभगति साधकी संगति करत अधम निरलाजा
मानुष जन्म फेर नहीं पैइहौ सब जीवन में राजा ॥
पर नारी प्यारी कर जाने सो नर नरक समाजा ॥
जिनके पन्थ भूल गये भौंदू कर चलने का साजा ॥
यहाँ नहीं कोई मीत तुम्हारा मात पितासुत आजा ॥
यह हैं सब मतलब के साथी काहे करत अकाजा ॥

बृद्ध भये पर नाम भजतु हैं निकसत सुरत अवाजा॥
टूटी खाट पुराना झिंगला पड़े रहो दरवाजा ॥
ब्रह्मा विष्णु महेश डराने, सुनत काल के गाजा ॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो चढले नाम जिहाजा ॥

शब्द ५६

चलत पिरान काया रे कैसे रोई ॥

काया पाय बहुत सुख कीनो नितउठ मलमल धोई
सोतन छीया छार हो जै है ना मन ले है कोई ॥
कहत प्राण सुन काया बोरी मोर तोर संग न होई
तोहे असमित्र बहुत हम त्यागा संग न लीन्हा कोई
ऊसर खेत के कुशा मंगाये चाँवर चबर के पानी ।
जीवत ब्रह्म को कोई न पूजे मुरदा के महमानी ॥
शिव सनकादि आदि ब्रह्मादिक शेष सहस मुख होई
जो जो जन्म लियो वसुधा में थिर न रह्यो है कोई ।
कहत कबीर अभि अन्तर की गति जानत विरले कोई ॥

शब्द ५७

जा दिन मन पक्षी उड़ जै हैं।

ता दिन तेरे तन तरवर के सबै पात झर जै हैं ॥
या देही को गर्व न कीजै, स्यार काग गिध खै हैं ॥
तनगति तीन विष्ट किरमी ह्वै, नातर खाक उड़ै हैं ॥
कहां वह नैन कहां वह शोभा कहां वह रूप दिखै हैं
जिन लोगन ते नेह करतु है तेई देखि घिनै हैं ॥
घरके कहत सवेरे काढ़ो भूत होय धरि खै हैं।
जिन पूतन को बहुविधि पाल्यो देव देव मनै हैं ॥
तेईलै बांस दियो खुपरी में, शीश फोरि बिखरै हैं ॥
अज हूं मूढ़ करै सत्संगत सन्तन में कछु पै हैं।
कहै कबीर सुनो भाई साधो आवागमन नसै हैं ॥

शब्द ५८

जतन बिन मिरगन खेत उजारे ॥

पांच मिरग पच्चीस मिरगनी तिन में तीन चितारे।
अपने अपने रसके भोगी चुगते न्यारे न्यारे ॥
पाँच डार सूटन की आई उतरे खेत मंझारे।

हा हा करत बाल लै भागे टेररहे रखवारे ॥
सुनियो रे हम कहत सबन को ऊंचे हांक हंकारे ।
यह नर देह बहुर नहि पै हो काहे न रहत संभारे ।
तन कर खेती मन कर बाड़ी मूल सुरत रखवारे ॥
ज्ञान बान और ध्यान धनुष करि क्यों नहीं लेत संभारे
सार शब्द बन्दूक सुरति धरि मारे तीन चितारे ॥
कहत कबीर सुनो भाई साधो उबरे खेत तिहारे ॥

शब्द ५६

अवधू कुदरत (अवगत) की गति न्यारी ॥
रंक निवाज करै वह राजा भूपति करै भिखारी ॥
जासे लौंग गाछ फर लागै चन्दन फूल न फूला ।
मच्छ शिकारी रमे जंगल में सिंह समुन्दर झूला ॥
रेंड रूख भयो मलियागिर चहुं दिश फूटै बासा ।
तीन लोक ब्रह्माण्ड खण्ड में अन्धरा देख तमाशा
पंगुला मेरु सुमेरू उड़ावै त्रिभुवन मांही डोलै ॥
गूंगा ज्ञान विज्ञान प्रकाशै अनहद वाणी बोलै ।
पाताले बान्ध अकाश पठावै शेष स्वर्ग पर राजै ।
कहै कबीर समरथ है स्वामी जो कछु करै सो छाजै ॥

शब्द ६०

हंसा जगमग जगमग होई ॥ टेक ॥

बिन बादल जहां बिजली चमके अमृत वर्षा होई ।
ऋषि मुनि देव करैं रखवाली पिय न पावैं कोई ॥
रात दिवस जहां अनहद बाजै धुनि सुनि आनन्द होई
झरना झरे जूहके नाके पियत अमर पद होई ॥
चेतन वाला चेत पियारे नहीं तो जात बहोई ।
साहिब कबीर प्रभु मिले विदेही चरणन भक्ति समोही

शब्द ६१

चलना है दूर क्यों सोवै रे ॥

चेत अचेत नर सोच बावरे बहुत नींद मत सोवैरे ॥
कामक्रोधमदलोभमेंफंसगयेहोहुशियारउमरकाहेखोवैरे
सिर पर माया मोह की गठरी, संगदूत तेरे होवै रे
सो गठरी तेरी बीच में छिन गई, मूंड पकार कहा रोवैरे
रस्ता तो वह दूर विकट है तज चल अकेला होवैरे
संग साथ तेरे कोई न चलेगा काकी डगरिया जोवैरे
नदिया गहरी नाव पुरानी केहि विधि पार तु होवैरे ।
कहैकबीर सुनो भाईसाधो व्याज केधोकेमूलमतखोवैरे

शब्द ६२

चरखा चलै सुरत बिरहिन का ॥

काया गारी बनी अति सुन्दर महल बनो चेतन का
सुरत भौंवरी होत गगन में पीढा ज्ञान रतन का ।
चित चमरक तिरगुण के टिकुवा माल मनोरथ मनका
पौनी पांच पच्चीस रंग की कुकरी नाम भजन का ॥
दृढ़ वैराग्य गाड़ दोऊ खूंटा मंझा जोग जुगत का ॥
द्वादश नाम धरा दोई पखुरी हथिया सार शब्द का
मिहोन सूत सन्तजन कातें मंझा प्रेम भगति का ॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो जुगतजुगत सत मनका

शब्द ६३

रमैया की दुलहन ने लूटा बाजार ॥

सुरपुर लूटानागपुर लूटा तीन लोकमचगई हाहाकार
ब्रह्मा लूटे महादेव लूटे नारद मुनि के परी पिछार ।
सृंगी की मिंगी कर डारी पाराशर के उदर विदार ॥
कनफूंका चिदाकाशी लूटे जोगेश्वर लूटे कन्त विचार
हमतो बचगये साहिब दया से शब्द डोर गहि उतरेपार
कहैकबीर सुनो भाई साधो इस ठगनी से रहो हुशियार

शब्द ६४

है सब में सब ही ते न्यारा ॥

जीव जन्तु जल थल सबही में शब्दव्यापकबोलन हारा
सबके निकट दूरसब हीतें, जिन जैसामनकीन्हविचारा
सार शब्द को जो जन पावै सो नहिं करत नेमआचारा
कहै कबीर सुनोभाई साधो शब्द गहे सो हंसहमारा

शब्द ६५

जाग हो काया गढ के मवासी ॥

जो बन्दे तुम जागत रही हो तुमहीं को मिलतसुहाग हो
जागत शहर में चोर न मूसै नहिं लूटे भंडार हो ॥
अनहद शब्द उठै घट भीतर चढके गगन गढ गाजहो
कहै कबीरसुनो भाईसाधो सार शब्द टकसार हो ॥

शब्द ६६

विरहिन सुनो पिया की बानी ।

सहजस्वभाव मूल रहू रहनी सुनो शब्द सुरति तानि
शीलसन्तोष के बांधो कांगर होय रहो मगन दिवानी
दुई फल तोड़मिलो हंसन में सोई नाम निशानी ।
तत्त भेष धारै जो विरहिन तो पियके मन मानी ॥

कुमति जराय सुमति उजियारी तब सूरत ठहरानी
सो हंसा सुख सागर पहुंचे भरै मुक्ति जहां पानी ॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो यह पद है निर्वानी ।
जो या पदकी निन्दा करिहै ताको नरक निशानी ॥

शब्द ६७

ऐसो रहन रहै वैरागी ॥

सदा उदास रहै माया से सत्य नाम अनुरागी ।
क्षमा की कण्ठी शील सरोनी सुरति सुमरनी जागी
टोपी अभय भक्तिमाथे पर काल कल्पना त्यागी ॥
ज्ञान गूदड़ी मुक्ति मेखला सहज सुई ले तागी ।
जुक्ति जमात कूबरी करनी अनहद धुनि लौ लागी
शब्द अधार अधारी कहिये भीख दया की मांगी ।
कहै कबीर प्रीति सतगुरुसे सदा निरन्तर लागी ॥

शब्द ६८

धुनि सुनके मनुवां भगन हुवा ॥

लाय समाज रहो गुरु चरणा अन्तकाल दुख दूरहुवा
शून्यशिखर पर झालर झलके बर्षै अमीरस बूंद चुवा

सुरत निरत की डोरी लागी तेहि चढ़ हंसा पार हुवा
कहै कबीर सुनो भाई साधो अगम पन्थ पर पावदिया

शब्द ६६

हंसा अमर लोक पहुंचावो ॥

मन के भरम धरो गुरु आगे ज्ञान घोड़ चढ़ आओ
सहज पलाण चित्त के चाबुक अलख लगाम लगावो
निरख परख के तर्कस बांधो सुरत कमान चढावो ।
रवि को रथ सहजे में मिलि है वोही को सान बुझावो
कुमति काट अलग करि डारो सुमति के नीर बुझावो ।
सार शब्द की बान्ध कटारी वाही से मार हटाओ
धीरज क्षमा का संग लिये दल मोह के महल लुटाओ
ताहि समय ममोसी राजा वाही को पकड़ मंगाओ
दिलको भेदी सहज ही मिलि है अनहद संख बजाओ
कहैं कबीर तोरे सिर पर साहिब ताही में लौ लावो

शब्द ७०

भजन बिन यों ही जन्म गंवायो ॥

गर्भवास में कौलकियो थो तब तोही बाहर लायो ।
जठर अग्नि ते काढ़ निकारयो गांठ बांध क्या लायो

बहबह मुवा बैलकी न्याई सोय रहो उठ खायो ॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो चौरासी भरमायो ॥

शब्द ७१

बन्दे करले आप निबेरा ॥
आप चेत लखु आप ठौर करु मूये कहां घर तेरा ॥
यही अवसर नहीं चेत्यो प्राणी अन्त कोई नही तेरा
कहै कबीर सुनो भाई साधो कठिन कालका घेरा ॥

शब्द ७२

दुलहिन तोय पीय के घर जाना ॥
काहे रोवो काहे गावो काहे करत बहाना ॥
काहे पहरो हरि हरि चुरियां पहिरो नाम के बाना ॥
कहैकबीर सुनोभाई साधो बिन पिय नहीं ठिकाना ॥

शब्द ७३

सिपाही मन दूर खेलन मत जाव ॥
दूर खेलन से मनुवा दुखित होय गगनमंडलमठछाव
यही पार गंगा वोही पार जमुना बीच सरस्वतीन्हाव
पांचको मारि पचीसको बशकरि तीन को पकरि मंगाव
कहै कबीरा धर्मदास से शब्द में सुरति लगाव ॥

मधुकर कौन मनायो माने ॥ टेक ॥
अविनाशी अति अगम अगोचर कहा प्रीति रसमाने
सिखवो जाय समाधि की बातें जहां हों लोग सयाने
हम अपने ब्रज ऐसे ही बसैं हैं बिरह बाय बौराने
जाके तन धन प्राण सूर हरि मुख मुसकान बिकाने ॥

शब्द ७४

जरा फिरसे बैन बजादे तुझे माखन देंगें ॥टेक॥
सारी सखियां हिलमिल आवें,
पीछे २ कहती जावें।
कोई वंशी की तान सुनादे ॥ १ ॥
माधव विरवा पर चढ़ जावें,
ग्वालिन नीचे शोर मचावें।
तू चीर हमारा लादे ॥ २ ॥
किसने बीज प्रेम का बोया,
किसने सखियों का मन मोह्या।
वंशीवारे तू सांच बतादे ॥ ३ ॥
तेरी नज़ीर नहीं इस जगमें,
यमुना आन पड़ी है मग में।

कोई प्रेम की धार बहादे ॥ ४ ॥
परम सुहावन सावन आयो,
सब सखियन को मन हुलसायो ।
कोई प्रेम की पींग झुलादे ॥ ५ ॥

शब्द ७५

इक दिन, साहेब बेनु बजाई ॥

सब गोपिन मिल धोखा खाई, कहैं जसुदा के कन्हाई
कोई जंगल कोइ देवल बतावै, कोइ द्वारिका जाई ॥
कोइ अकाश पाताल बतावै, कोइ गोकुल ठहराई ।
जल निर्मल परबाह थकित भे, पवन रहे ठहराई ॥
सोरह बसुधा इकइस पुरलों, सब मुर्छित होइ जाई ।
सात समुद्र सबै घहरानी तेंतिस कोटि अघानो ॥
तीन लोक तीनों पुर थाके, इन्द्र उठो अकुलानो ।
दस औतार कृष्ण लोंथाका, कुरम बहुत सुखपाई ॥
समुझि न परो वार पारलों, या धुनि कहतें आई ।
सेसनाग औ राजा बासुक, बराह मुर्छित होइ आई
देव निरंजन आद्या माया, इन दुनहुन सिर नाई ॥

कहैं कबीर सत लोक के पूरुष शब्द केर सरनाई ।
अमी अंकतें कुहुक निकारी, सकल सृष्टि परछाई ॥

शब्द ७६

जागो बंशी वारे ललना जागो मोरे प्यारे ॥ टेक ॥
रजनी बीति भोर भयो है, घर २ खुले किवारे ।
गोपी दही मथत सुनियत हैं कंगना के झनकारे ॥
उठो लाल जी भोर भयो है सुर नर ठाडे द्वारे ।
ग्वाल बाल सब करत कुलाहल जय२ शब्द उचारे ॥
माखन रोटी हाथ में लीनी गौवन के रखवारे ॥
मींरा के प्रभु गिरधर नागर शरण आया को तारे ॥

शब्द ७७

भोर भई बाजीमधुरमुरलिया कैसेधरे जीयाधीर ॥टेक
मधुबन बाजी वृन्दावन बाजी तट यमुना के तीर ॥
बैठ कदम परवंशीबजावेस्थिर भयो यमुना नीर ॥
दर्द न जाने पीर ना पिछाने श्याम बड़ो बेपीर ॥
मींरा के प्रभु गिरधर नागर आखिर जात अहीर ॥

शब्द ७८

नन्द नन्दन वृन्दाबन चन्द ॥ टेक ॥

यह कह जननी जगावत लालन ।
जागो मोरे आनन्द कंद ॥ १ ॥
आलस भरे उठे मनमोहन ।
चलत चाल ठुमकत अति मन्द ॥२
पौंछ वदन अंचल सौं यशुमति ।
उर लगाय उपज्यो आनन्द ॥ ३ ॥
सब बृज युवति आईं देखन ।
दर्शन होत मिट्यो दुःख द्वन्द ॥४
वृजपति श्री गोपाल परिपूर्ण ।
जाको यश गावत श्रुति छन्द ॥५॥

शब्द ७९

जागिये वृजराज कुँवर कमल कोष फूले ॥टेक॥
कुमुद बृन्द सकुच भये भृंगलता झूले ॥
तमचर खग शोर सुन्यो बोलत वन राई ।

रांभत गोक्षीर देत वछरन हित धाई ॥
विधु मलीन रवि प्रकाश गावत वृज नारी ।
सूर श्याम प्रात उठे अम्बुज करधारी ॥

शब्द ८०

मोहे लग गयो बाण सुरंगी हो ॥ टेक ॥
धन सतगुरुउपदेश दियो है, होगयो चित्त भिरंगी हो
ध्यान पुरुष की बनी है तिरिया, घायल पांचो संगी हो
घायल की गति घायल जाने, क्या जाने जात पतंगी हो
कहत कबीर सुनो भाई साधो, निशिदिनप्रेम उमंगी हो

शब्द ८१

जागिये रघुनाथ कुंवर पंछी बन बोले ॥ टेक ॥
चन्द्र किरण शीतल भई, चकवी पिय मिलन गई ।
त्रिविध मंद चलत पवन, पल्लव द्रुम डोले ॥
प्रात भानु प्रगट भयो, रजनी को तिमिर गयो ।
भृंग करत गुंजगान, कमलन दल खोले ॥
ब्रह्मादिक धरत ध्यान, सुर नर मुनि करत गान ।
जागन की वेर भई, नयन पलक खोले ॥

तुलसीदास अति आनन्द, निरखि के मुखारविंद।
दीनन को दान, भूषण बहु मोले॥

शब्द ८२

कोई प्रेम की पींग झुलाओ रे॥ टेक॥
भुज के खम्भ प्रेम की रसरी,
मन महबूब झुलाओ रे॥ १॥
सूहा चोला पहिर अमोला,
निज घट पिय को रिझाओ रे॥
नैनन बादर की झर लाओ,
स्याम घटा उर छाओ रे॥ ३॥
आवत जावत सुत के मग पर,
फिकर पिया को सुनाओ रे॥४
कहत कबीर सुनो भाई साधो,
पिय को ध्यान चित लाओ रे॥

सदाचार

मैत्री सद्भि समं कुर्यात् स्नेहं सत्सु तु सर्वथा ।
संसर्गं साधुभिः कुर्यादसत्संगं परित्यजेत् ॥१ ।

श्रेष्ट मनुष्यों के साथ मित्रता करे, उनके ऊपर सब प्रकार से स्नेह रक्खे और मन वचन तथा कर्म से संसर्ग भी उन्हो का करे और नीच मनुष्यों का संग सब प्रकार से छोड़ दे ॥ १ ॥

सेवेत देवभूदेवबृद्ध वैद्यनृपातिथीन् ।
विमुखान्नार्थिनः कुर्यान्नावमन्येत कानपि ॥२॥

देव ब्राह्मण, राजा, वृद्ध, वैद्य तथा अतिथी लोगों की सेवा करे, याचक को निराश कर खाली न जाने दे । किसी की अवज्ञा न करे ॥ २ ॥

गुरुणां सन्निधौ तिष्ठेत्सदैव विनयान्वितः ।
पादप्रसारणादीनि तत्र नैव समाचरेत् ॥ ३ ॥

गुरु (पूज्य) लोगों के पास सदा नम्रता पूर्वक बैठे, उन के पास पांव पसार कर बैठना आदि अयोग्य कार्य न करे ॥३॥

अपकार परेऽपि स्यादुपकारपरः पुमान्।
आत्मवत् सकलान्पश्यंद्वैरिणो दूरतो वसेत् ॥४॥

अपकार करने वाले मनुष्यों के साथ भी सदा उपकार करे। सबको अपने सदृश जाने और द्वेषी से दूर रहे ॥४॥

न किञ्चिदात्मनः शत्रूनात्मानं कस्यचिद्रिपुम्।
प्रकाशयेन्नापमानं न च निःस्नेहतां प्रभो ॥ ५ ॥

कोई मनुष्य हमारा वैरी है अथवा अमुक मनुष्य का मैं वैरी हूं ऐसा किसी प्रकार प्रकाशित न करे। किसी स्थान में अपना अपमान हुआ हो और अपने ऊपर स्वामी का स्नेह न हो इसको भी प्रकाशित न करे ॥ ५ ॥

नात्मानमुदके पश्येन्न नग्नः प्रविशेज्जलम्।
तथा नाज्ञातगाम्भीर्यं न हिंस्र प्राणि सेवितम् ॥६

पानी में अपना प्रतिबिम्ब न देखे, नग्न होकर जल में न घुसे। जिसकी गहराई विदित न हो तथा जिस जल में मच्छादि हिंसक जीव रहते हों उसमें न घुसे ॥ ६ ॥

काले हितं मितं सत्यं संवादि मधुरं वदेत्।
भुञ्जीत मधुरं प्रायं स्निग्धं काले हितं मितम् ॥७॥

बोलने के समय थोड़ा, हितकारी, सत्य, प्रसंग के अनुसार और मिष्ट वचन बोले। भोजन के समय अधिक रस वाले घी सहित और हितकारी पदार्थों का प्रमाणानुसार भोजन करे ॥७॥

न रात्रौ दधि भुञ्जीत न च निर्लवणं तथा।
न मुद्गसूपं ना क्षौद्रं न चाप्यघृतशर्करम् ॥ ८॥

रात्रि में दही न खाय, और विना नमक के दही कभी नहीं खाय, तथा मूंग की दाल, शहद, घी और शर्करा के विना भी दही नहीं खाय ॥८॥

जनस्याशयमालक्ष्य यो यथा परितुष्यति।
तं तथैवानुवर्तेत पराराधन पण्डितः ॥ ९ ॥

मनुष्यों के अभिप्राय को जानकर जो मनुष्य जिस प्रकार से प्रसन्न हो उसी प्रकार प्रवर्ते क्योंकि अन्य मनुष्यों को प्रसन्न रखना ही चतुरता है ॥९॥

नैकः सुखी न सर्वत्र विश्वस्तो न च शंकितः।
नोद्यमे विरमेत्क्वापि हेतावीर्ष्येत्फले न तु ॥१०॥

जिस प्रकार सहाय विना मनुष्य सुखी नहीं होता उसी प्रकार सबके ऊपर विश्वास करने वाला अथवा सबके ऊपर

सन्देह रखने वाला भी मनुष्य सुखी नहीं होता। कभी उद्यम करने से खाली नहीं बैठना चाहिये किसी के सफलीभूत उद्यम को देखकर उस पर ईर्ष्या करना नहीं चाहिये जो पुरुष ऐश्वर्यवान् के ऐश्वर्य को देख कर दुःख मानते हैं वे सदैव दुःखी रहते हैं। विद्वानों को यह विचार करना चाहिये कि अमुक पुरुष को किस प्रकार और किस चतुरता से यह ऐश्वर्य प्राप्त हुआ है उसी विद्या और उसी उपाय से हम भी धन उपार्जन करके संसार में अपना यश प्रकाश करें परन्तु चतुर जन किसी के संचित किये हुये धन की इच्छा न करें ॥ १० ॥

वेगान्न धारयेज्जातु मनो वेगान्विधारयेत् ।
न पीड़येदिन्द्रियाणि न चैतानति लालयेत् ॥११॥

मल मूत्र अथवा अपान वायु आदि के वेगों को कदापि नहीं रोके किन्तु काम क्रोधादिक मन के वेगों को रोकना चाहिये इन्द्रियों को पीड़ित नहीं करें और उनका बहुत लाड भी न करें॥ ११ ॥

वर्षातपादिषु च्छत्री दंडी रात्रौ भयेषु च ।
सोपानत्कस्तनुं रक्षेद्विचरेद्युगमात्रदृक् ॥ १२ ॥

वर्षा अथवा धूप आदि में छत्र (छत्री) धारण करके चले, रात तथा भय के समय हाथ में लकड़ी लेकर चले, जूते पहरे रहे और देह की रक्षा करे आगे को चार हाथ पृथ्वी देख कर चले ॥ १२ ॥

नदीं तरेन्न बाहुभ्यां नाग्निस्कन्धमभिव्रजेत् ।
सन्दिग्धनावं वृक्षं च नारोहेद्दुष्ट यानकम् ॥१३॥

हाथों से नदी को नहीं तरे, जहां अग्नि का समूह हो वहां नहीं जाय, सन्देह युक्त वाहन पर नहीं चढ़े और उन्मत्त हाथी के पास नहीं जाय ॥ १३ ॥

नासंवृतमुखं कुर्यात् सभायां च विचक्षणः ।
कासं श्वासं तथोद्गारं जृम्भणं क्षवथुं तथा ॥१४॥

श्रेष्ठ मनुष्यों की सभा में सन्मुख मुख करके खांसी श्वास, डकार, जम्भाई, और छींक नहीं लेवे ॥ १४ ॥

नासिकां न विष्कुणीयान्नासोत्कटकः क्वचित् ।
नोर्ध्वजानुश्चिरं तिष्ठेन्न नखेन लिखेद्भुवम् ॥१५॥

सभा में बैठ कर कभी नाक को नहीं कुरेदे, उकरू कभी नहीं बैठे क्योंकि इस प्रकार से बैठना हानिकारक है। एक समय एक प्रतिष्ठित अंगरेज से पूछा कि तुम लोग नीचे को पैर

लटका कर शौच क्यों जाते हो तो उन्होंने उत्तर दिया कि "ऊकरू बैठ कर शौच जाने में मनुष्य का दिमाग कमजोर होता है यह बात साइंस ने भी सिद्ध करदी है"। हमारे हिन्दू वैदिक ग्रथों में भी यह बात लिखी है। अतः ऊकरू बैठ कर शौचादि जाना हानिकारक है। अधिक देर तक घुटुएँ ऊंचे करके नहीं बैठे और नखों से पृथ्वी कभी न खोदे ॥१५॥

सम्मार्जनीरजो नैव देहे दद्यात्कदाचन।
न नखेन तृणं छिन्द्यान्नाच्छिष्टो ब्राह्मणं स्पृशेत् ॥

शरीर पर कभी बुहारी की धूल न पड़ने देवे, नख से तृण को नहीं तोड़े झूठे मुख ब्राह्मण को स्पर्श न करे ॥१४॥

नोपरक्तं न चोद्यन्तं नास्तं यातं दिवाकरम्।
सर्वथा न समीक्षेत न जले प्रतिबिंबितम् ॥ १७ ॥

राहु से ग्रसित, (ग्रहण के समय) उदय होते और अस्त होते समय सूर्य को न देखे पानी में सूर्य का प्रतिबिम्ब पड़ा होय उसको न देखे ॥१७॥

नेक्षेत सततं सूक्ष्मं दीप्ता मेध्यांप्रियाणि च।
पौरन्दरं धनुर्नैव दर्शयत्कमपिक्वचित् ॥ १८ ॥

सूक्ष्म प्रकाश युक्त अपवित्र और अप्रिय वस्तु को निरन्तर

न दे खे। आकाश में इन्द्र का धनुषतना हो उसको किसी समय भी किसी को नहीं दिखावे ॥ १८ ॥

नेच्छेद्बलवतायुद्धं न भारं शिरसा वहेत्।
गात्रं नादयेत्केशान् हस्तेनधनु यान्नच ॥ १९ ॥

बलवान के साथ लड़ाई करने की इच्छा नही करे, बोझ शिर पद न उठावे क्योंकि मस्तक पर बोझ उठाने से उसका असर दिमाग पर बुरा पड़ता है। यह बात अपने शास्त्रों में निषिद्ध है। भारतवर्षीयों ने अंगरेजों की कोट पतलून आदि बुरी बातों का तो अनुकरण किया है जो कष्ट देने वाली हैं और टोप आदि जो लाभदायक वस्तुयें हैं उनका नहीं किया। टोप के पहनने से आंखों से सूर्य का चौंधा नहीं पड़ता इस लाभ के सिवाय यह भी एक और बड़ा लाभ है कि जो हमारे ग्रंथों में लिखा है कि शिर पर बोझ न उठावे वह बात भी पूर्ण होती है क्योंकि साफा आदि बांधना शिर पर बोझ रखने में सहायक होता है और टोप बाधक। जब टोप पहनेंगे तो आप ही शिर पर बोझ नहीं रखा जा सकेगा। हाथ इत्यादि ठोक कर शरीर का शब्द न करे हाथों से केशों को नहीं हिलावे ॥१९॥

न गच्छेत्पूज्ययोर्मध्ये दम्पत्योरन्तरेण च।
रिपोरन्नं न भुञ्जीत गणिकान्नमपि क्वचित् ॥

दो पूज्य मनुष्य अथवा स्त्री पुरुष खड़े हों उनके बीच में होकर नहीं जाय शत्रु अथवा वेश्या का अन्न कदापि नहीं खाय ॥२०॥

प्रतिभू न भवेत्क्वापि न च साक्षी वृथा भवेत् ।
छागीं न धारयेज्जातु द्यूतं दूरात्परित्यजेत् ॥ २१ ॥

किसी समय भी किसी का प्रतिभू नहीं बने किसी का वृथा साक्षी न होय। किसी का धरोहर न रक्खे और जहां जूवा होता हो उस को दूर से ही छोड़दे ॥२१॥

न भिन्ने शयने स्वप्यान्नानेकविवरेऽपि च ।
नैको देवालये नैव रात्रौ तरुतलेऽपि च ॥ २२ ॥

स्त्री को अलग शय्या पर न सुलावे, पुरुषों के स्थानों में स्त्री को न रक्खे और छिद्रों वाली फटी टूटी शय्या पर शयन न करे, रात्रि को देव मन्दिर में अथवा वृक्ष के नीचे अकेला न सोवे ॥२२॥

मूत्रोच्चारसमुत्सर्गं दिवा कुर्यादुदङ्मुखः ।
दक्षिणाभिमुखो रात्रौ सन्ध्ययोश्च यथा दिवा ॥

दिन में मल मूत्र का त्याग उत्तराभिमुख होकर करे और रात को दक्षिण में मुख करके और दोनों सन्ध्याओं में दिन की भांति करे ॥२३॥

छायायामन्धकारे वा रात्रावहनि वा द्विजः ।
यथा सुखं मुखः कुर्यात् प्राणबाधाभयेषु च ॥२४॥

छाया में वा अंधेरे में चाहे रात हो वा दिन जिधर इच्छा हो मुख करे । तथा प्राणों की बाधा के भय में यथेच्छ मुख करके बैठे ॥ २४ ॥

एवं दिनानि गमयेत्सदाचार परः सदा ।
ततो रात्रि प्रयुक्तानि कुर्यात्कर्माणि मानवः ॥२५

इस प्रकार सदाचार में तत्पर रहकर दिन व्यतीत करे और रात्री को रात्री के समयानुकूल कार्य्य करे ॥२५॥

इत्याचारं समासेन भाषितं वः समाचरेत् ।
स विंदत्यायुरारोग्यं प्रीतिधर्मधनं यशः ॥ २६ ॥

संक्षेप से यह जो सदाचार कहा उसके अनुसार जो मनुष्य आचरण करता है उसको आयु आरोग्यता प्रीति धर्म और यश की प्राप्ति होती है ॥ २६ ॥

सत्योपदेश

१. हे सच्चिदानन्दस्वरूप, सर्वशक्तिमान, सर्वहृदयान्तर्गत, सर्वव्यापक प्रभो ! यदि मैं तुझको यहां आत्मा में नहीं पा सका तो किस जगह पा सकूंगा।

२. सृष्टि के सकल पदार्थ एक विशेष आदर्श की ओर जाते हुवे दीखते हैं।

३. मनुष्य जीवन के प्रति विभाग में हमको प्रतीत होता है कि हर एक क्रिया किसी विशेष आदर्श की ओर है।

४. जड़ पदार्थ ऐसी क्रिया नहीं कर सकते। अतः हम इस परिणाम पर पहुंचते हैं कि यह सकल पदार्थ किसी चैतन्य अधिष्ठात्री शक्ति की आज्ञानुसार विचरते हैं।

५. ब्रह्माण्ड के सकल पदार्थ उच्च स्वर से पुकार रहे हैं कि परमात्मा विद्यमान है।

६. संसार की सुन्दर वस्तुऐं एक विशेष सौन्दर्य की सत्ता की साक्षी हैं।

७. प्रत्येक मधुर वस्तु अत्युत्तम मधु को दर्शाती है।

८. हरेक पवित्रता उस पवित्रता के स्रोत को दर्शाती है।

९. जो अन्य पदार्थों के सौन्दर्य और उत्तमता का स्रोत है

उसी को परमात्मा कहते हैं।

१०. ईश्वर परिपूर्ण है वह अनन्त है, वह ज्ञान स्वरूप है। उसका ज्ञान अनुमान नहीं वरंच प्रत्यक्ष है।

११. ज्ञान के अतिरिक्त उसमें कृति भी है।

१२. इस कृति के कारण वह अपनी भलाई को दूसरों तक पहुंचाता है और मनुष्यों को अपने स्वरूप में घड़ता है।

१३. भगवान् में ज्ञान और कृति ही नहीं वरंच प्रेम भी है।

१४. प्रेम की तुलना इसी से हो सकती है कि प्रेम के विषय में कितनी नेकी है।

१५. वह प्रेम स्वरूप है।

१६. जो कुछ हम अनुभव करते हैं और जो कुछ हमारे दृष्टि-गोचर होता है वह इसी ईश्वर का विकाश है जो आप छिपा हुवा है।

१७. सारे पदार्थ भगवान् के शब्द हैं और बोलते हैं।

१८. प्रत्येक वस्तु ईश्वर से परिपूर्ण है।

१९. जब कभी हम किसी वस्तु से प्यार करते हैं तो उसके आभ्यन्तर वास करने वाले भगवान् के कारण से करते हैं।

२०. प्यासा पुरुष जल की अभिलाषा इसलिये करता है कि जल

में भगवान् निवास करते हैं।

२१. मनुष्य को बड़े से बड़ा आनन्द भले कामों के चिन्तन से होता है।

२२. भगवान् केवल उनसे प्यार करता है जो अन्याय से घृणा करते हैं।

२३. मूर्ख एक ही अध्यापक से सीखते हैं और वह है विपत्ति।

२४. वह पुरुष जिससे सारे डरते हैं सबसे डरता है।

२५. मेरे लिये कर्तव्य वह है जो मुझे भाता है।

२६. एक काम का करना ही पर्याप्त नहीं परन्तु आवश्यक है कि हम इसे सोच विचार कर करें।

२७. सदाचारी जीवन में सबसे बड़ा धर्म यह है कि मनुष्य अपने आपको जाने।

२८. सच्ची तपस्या इन्द्रिय संयम और दम है।

२९. हमारे अन्दर देवासुर संग्राम हो रहा है। असुर प्रत्येक की अवस्था में विशेष दुर्बल अंश को ढूंढते हैं और उस पर प्रहार करते हैं।

३०. एक पुरुष की अवस्था में यह अंश काम दूसरे की अवस्था में क्रोध और तीसरे की अवस्था कोई और अंश होता है।

३१. जो मनुष्य अपने आपको नहीं जानता वह अपने दुर्बल अंश को भी नहीं जानता और इन्द्रियों को वश में रखने के अयोग्य है।

३२. मनुष्य का सारा जीवन चेष्टा का प्रकाश है।

३३. जब कभी हम चेष्टा करते हैं तो किसी त्रुटि को दूर करने के लिये करते हैं।

३४. त्रुटि दुःखों का मूल है।

३५. जब एक न्यूनता दूर होती है तो स्वाभाविक एक नई न्यूनता उत्पन्न हो जाती है।

३६. विषयों की तृप्ति से अपने आपको शान्त करना ऐसा ही सम्भव है जैसा घृत के छींटों से अग्नि को बुझाना।

३७. निर्वाण जीवन का आदर्श है।

३८. जीवन का उद्देश्य जीवन दीर्घ करना नहीं वरंच जीवन के बन्धन से मुक्त होना है।

३९. जगत में सुख से दुःख अधिक है और ज्यों ज्यों समय व्यतीत होता जाता है दुःख बढ़ता जाता है।

४०. यदि हम कबरों को ठोकर लगावें और मुर्दों से पूछें कि

चोह जीवित होना चाहते हैं या नहीं तो वह शिर हिलादेगें। (सोपन हायर)

४१. तुम इस प्रकार काम करो कि अपने काम के नियम को सर्वगत नियम बनाने की चेष्टा कर सको।

४२. हमारे काम का उद्देश्य किसी और उद्देष्य का साधन होने के स्थान में स्वयं साध्य होना चाहिये।

४३. इस तरह काम करो कि मनुष्यत्व तुम्हारी अपनी अवस्था में या किसी और की अवस्था में साधन की न्याईं वर्ताव में न लाया जाय वरंच अन्तिम उद्देश्य समझा जाय।

४४. जो कुछ संसार में होता है वह भावी के आधीन है। ऐसी अवस्था में हम क्यों चिन्ता करें।

४५. अडोल चित्त होना, सिर आई को शान्ति से सहना भगवान् के साथ प्रेम करना यही जीवन का मुख्योद्देश्य है।

४६. ईश्वर की उपासना जन्म और प्रकृति की उपासना मरण है।

४७. विद्या जीवन और अविद्या मृत्यु है।

४८. सत्य जीवन और झूठ मरण है।

४९. धर्म जीवन और अधर्म मरण है।

५०. परोपकार जीवन और स्वार्थ मरण है।
५१. पुरुषार्थ जीवन और आलस्य मरण है।
५२. ब्रह्मचर्य्य जीवन और व्यभिचार मरण है।
५३. सादापन जीवन और सजावट मरण है।
५४. एकता जीवन और विरोध मरण है।
५५. मित्रता जीवन और शत्रुता मरण है।
५६. वीरता जीवन और कायरता मरण है।
५७. सत्संग जीवन और कुसंग मरण है।
५८. संतोष जीवन और लोभ मरण है।
५९. अहिंसा जीवन और हिंसा मरण है।
६०. कृताज्ञता जीवन और कृतघ्नता मरण है।

प्रत्येक मनुष्य जीवन से प्रेम रखता है और मौत से डरता है, इस कारण उपरोक्त मौत के साधनों से घृणा करनी उचित है।

६१. एक परमात्मा को सर्वोपरि इष्टदेव मानना, उसी की पूजा करना, सम्पूर्ण कर्म और जीवन का आधार समझना उसके पवित्र नाम का गुप्त जप करना और उस पर पूर्ण विश्वास रखना चाहिये।

६२. ईश्वर, जीव और माया शान्त अनादि हैं और ब्रह्म अनन्त अनादि है।

६३. मुक्ति अनन्त और अपार है। त्रिविध दुःख की अत्यन्त निवृत्ति और परमानन्द की प्राप्ति रूप है।

६४. कर्मों के अनुसार उन्नति पूर्वक शुभाशुभ जन्म मानना चाहिये।

६५. अवतार, मूर्त्तिपूजा, तीर्थ श्राद्ध आदि पुरानी बातों को जो बुद्धि के अनुकूल हों मानना चाहिये।

६६. वेद शास्त्र आदि सर्व प्रमाण-ग्रन्थों की अच्छी बातों को जो बुद्धि के अनुकूल हों मानना चाहिये।

६७. सर्व विद्या और समस्त पुस्तकों के पढ़ने में मनुष्य मात्र का अधिकार होना चाहिये।

६८. एक मनुष्य जाति है और जैसा करता है वैसा बनता है जन्म से कोई अच्छा बुरा नहीं होता। इसमें जाति पांति ऊंच नींच का कोई भेद न होना चाहिये।

६९. अध्यात्म विद्या में गीता उपनिषद् का नित्य पाठ करना चाहिये।

७०. आलस्य छोड़ कर आजन्म विद्याध्ययन करना चाहिये।

७१. सब काम समय पर करने चाहियें।

७२. चार वार सन्ध्या करनी चाहिये।

७३. ईश्वर को और मौत को याद रखना चाहिये।

७४. भगवान् के दर्शन करने के लिये योगाभ्यास करना चाहिये।

७५. देश नरेश, महेश की भक्ति करनी चाहिये।

७६. सब मतों को, उनकी पुस्तकों को, उनके अवतार तथा पीर पैगम्बरों को और अन्य देशों के मनुष्यों को समान दृष्टि से देखना चाहिये। सबको अपना आपा समझना चाहिये और परस्पर का भेद झूठा समझना चाहिये।

७७. प्यारा, हितकर, सच्चा और मधुर भाषण करना चाहिये।

७८. अपने घर पर आये हुवे अतिथि का यथायोग्य पूजन करना चाहिये।

७९. आपत्ति आने पर आनन्द में मग्न रहना चाहिये।

८०. अपने साथ में की हुई दूसरे की बुराई को और दूसरे के साथ में किये हुवे अपने गुण को भूल जाना चाहिये।

८१. सम्पूर्ण कर्मों का फल परमात्मा को अर्पण करना चाहिये।

८२. प्रारब्ध से पुरुषार्थ को बड़ा समझना चाहिये।

८३. बलवान् की अपेक्षा निर्बलों को विशेष सुभीता देना चाहिये।

८४. मन वाणि, और कर्म से सबको सुख पहुंचाना चाहिए।

८५. गौ रक्षा के लिये उत्तम नसल उत्पन्न करके दुधार बनाना चाहिये और गोचर भूमि छुड़वाना चाहिये।

८६. विषयों के आधीन न होना चाहिये। अधिक उपाधि नहीं बढ़ानी चाहिये। सारासार का विचार करते रहना चाहिये। साधु सज्जनों के सत्संग में जाना चाहिये। अधिक सन्तान न बढानी चाहिये।

८७. जिसे अपने लिये चाहे उसे दूसरे के लिये करना चाहिये।

८८. हरेक काम सबकी भलाई के लिये पवित्र आकांक्षा से करना चाहिये।

८९. दूसरों की बड़ाई सुनकर प्रसन्न होना चाहिये।

९०. पड़ोसी का मान आदर करना चाहिये।

९१. खान पान प्रेम और शुद्धताई के साथ मनुष्यमात्र का कर लेना चाहिये

९२. दो बार हांडी का और एक बार चूल्हे का पका खाना चाहिये

९३. मीठा भोजन दूसरे को खिला कर खाना चाहिये।

९४. मोटा खाना और मोटा पहरना चाहिये।

९५. बहुत भूख लगे तब खाना चाहिये और बहुत नींद आवे तब सोना चाहिये।

९६. सात्विक पदार्थ जो बुद्धि इत्यादि को बढावें भोजन करना चाहिये।

९७. विवाह स्वयंवर की रीति से जाति पांति के विचार बिना लड़का लड़की के परस्पर प्रेम होने पर उनकी इच्छानुसार होना चाहिये।

९८. एक पुरुष को एक ही स्त्री के साथ विवाह करना चाहिये आवश्यक्ता होने पर दूसरी से भी, विवाह सम्बन्ध में जो पुरुष को अधिकार हैं वही स्त्री को भी होने चाहियें।

९९. हर विषय में स्त्री पुरुषों के समानाधिकार होने चाहियें।

१००. स्त्रियों का आदर मान करना चाहिये और उन्हें प्रणाम करनी चाहिये। पैर की जूती समझने की अपेक्षा शिरका मुकुट समझना चाहिये इसके स्मरणार्थ "गौरी शंकर सीताराम राधेश्याम श्यामाश्याम" इस मन्त्र का जप करना चाहिये।

१०१. स्त्री को पतिव्रत धर्म और पुरुष को नारिव्रत धर्म पालन करना चहिये ।

१०२. स्त्री पुरुषों को ऋतुगामी होना चाहिये ।

१०३. अच्छे २ लाभदायक पूज्य उत्तम वृक्ष लगाने चाहियें। वृक्षों तथा औषधियों की नसल बढ़ाकर प्रभूत फल देने वाले बनाने चाहियें ।

१०४. तालाब, कूवा, मन्दिर, प्याऊ आदि बनवानें चाहियें ।

१०५. व्याज थोड़ा लेना चाहिये ।

१०६. देश और धर्म के लाभ को विचारते हुवे व्यापार करना चाहियें ।

१०७. दश दश पांच २ ग्रामों के मध्य में एक एक आश्रम बनना चाहिये और वहां ही जंगल में लड़के लड़कियों की पाठशाला होनी चाहिये ।

१०८. कभी २ नांचना और गाना भी चाहिये ।

१०९. वृद्ध मां बाप की सेवा करनी चाहिये ।

११०. मुकुटदार टोपी तथा टोप पहनना चाहिये ।

१११. बालकों को खेल के द्वारा विद्या सिखानी चाहिये ।

११२. सबको बांसुरी बजानी चाहिये ।

११३. ब्रह्म मुहूर्त्त में उठना चाहिये।

११४. किसी काम को अकेली ही न सोच कर दूसरे की सलाह करनी चाहिये।

११५. अपने पापों को प्रकट कर शुभ कर्मों को छिपाना चाहिये।

११६. ऋण से मुक्त रहना चाहिये।

११७. जैसे तुरत की ब्याई गौ अपने बच्छे से प्यास करती है वैसे ही सबसे वर्त्तना चाहिये।

११८. अपने लाभ का दसवां भाग पुण्य करना चाहिये।

११९. रात को मुख उघाड़ कर सोना चाहिये।

१२०. रात को दक्षिण की ओर, दिनमें उत्तर को मुख करके मलमूत्र का विसर्जन करना चाहिये।

१२१. एक हाथ से शिर खुजाना चाहिये।

१२२. मनुष्य को अपनी स्वतन्त्रता से ऐसा धर्म स्वीकार करना चाहिए जिसमें प्रीति उत्साह निर्भयता होवे।

१२३. थोड़ा बोलना चाहिए और कभी २ मौन भी रखना चाहिए।

१२४. धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शान्ति शौच इन्दिय निग्रह करना चाहिये, सुखियों से मित्रता, दुःखियों पर दया साधुओं के साथ मुदिता, और दुर्जनों के साथ उपेक्षा करनी चाहिये।

कथा

रहता था एक नगर में, कोई सेठ धनवान।
सांसारिक व्यवहार में, था अति चतुर सुजान॥
सांसारिक व्यवहारिक कामों में, बुद्धि थी अत्यन्त प्रबल।
था धन उसके घर में इतना, जितना अथाह सागर में जल॥
सुत धन दारादिक सारी सामग्री में था वह सेठ कुशल।
तो भी अशान्ति थी चितमें, बानर की तरह था मन चंचल॥
ऐसा था वह सेठ, मोहमें में फंसा हुआ पर।
पूर्व पुण्य बल से प्रकाशमय था उसका घर॥
सुत दारा तो दोनों थे उसके अज्ञानी।
किन्तु सुतवधू थी, पतिव्रता सती सयानी॥
एक पुत्रवधू उसके घरमें, विदुषी थी और सब गुण खानी।
आत्मा में अपने स्थित थी, और योगिनी भी थी और थी ज्ञानी॥
वह विविध प्रकार युक्तियों से, दृष्टान्त सुनाया करती थी।
कल्याणकारिणी वाणी में, सबको समझाया करती थी॥
निज पति पै और निज सास पर, उसने प्रभाव अपना डाला।
पर नहीं श्वसुर के हृदय में, कुछ हुआ ज्ञान का उजियाला॥

वह मायारूपी मदिरा को, पीकर उन्मत्त रहा करता।
घर को धन को ही देख देख कर, हरदम मस्त रहा करता॥
जिसने मनरूपी दर्पण में, लक्ष्मी का बिम्ब उतारा हो।
ऐसे अज्ञानी प्राणी का, उपदेश से क्या निस्तारा हो॥

एक दिवस की बात है सुनिये चित्त लगाय।
पुत्रवधू निज भवन में भोजन रही बनाय॥

छत्तीस प्रकार के व्यञ्जन थे उसकी रसोई में धरे हुवे।
और शुद्ध स्वच्छ सब पात्रों में सारे भोजन थे भरे हुवे॥
वह शीलवती सुन्दर नारी श्रद्धा से भोजन बना रही।
और थाल थालियों में उत्तम व्यञ्जन रख कर सजा रही॥
उस समय सेठ के मन्दिर में, आये एक बाल ब्रह्मचारी।
और क्षुधा निवृत्ति के कारण आकर बोले जय कृष्ण हरी॥

यह शब्द सुना जब नारी ने, तब दृष्टि साधू पर डाली।
उसकी नूरानी सूरत पर, देखी एक तेजमयी लाली॥

उस योगीराज के चेहरे पर, कुछ अजब प्रकाश झलकता था।
उसका सुर्खीमायल चेहरा, सूरज की तरह दमकता था॥
वह देवी भी थी बड़ी चतुर, उस साधू को पहचान गई।
यह महात्मा कोई ज्ञानी है बस इतना मनमें जान गई॥

जौहरी के सन्मुख आकर के, नहीं लाल छिपाये छिपता है।
परखनेवाले के हाथों में आकरके, फिर धनका मोल निखरता है॥

योगीराज को प्रथम तो, झुक कर किया प्रणाम।
पुनः इस तरह पर लगी कहने सुन्दर नाम॥
अहो किसलिये की कृपा हम पर हे मुनिराज।
और पुनः इतने त्वरित (जल्दी) कैसे पहुंचे आज॥

नीची नजरों से मुसकरा कर यों मुनिराज ने फरमाया।
भोजन की इच्छा से माता यह देह यहां चलकर आया॥
और शीघ्र यहां आने का हम तुमको क्या कारण बतलावें।
इस काल की अद्भुत गति देखी देवता न इसकी थाह पावें॥
सारा संसार असार है यह क्षण में कुछ है क्षण में कुछ है।
एक बाज़ीगर का खेल सा है क्षण में कुछ है क्षण में कुछ है॥
इसलिए जगत् में हे माता एक पलका नहीं भरोसा है।
जो कुछ करना है आज ही कर यह कौन कहे कल को क्या है॥

योगीराज की वार्ता सुन कर अति गम्भीर।
शुद्धस्वरूपा नारि के वहा नयन से नीर॥

वह उन साधू से फिर यों कहने लगी यह आप सत्य फरमाते हैं
ऋषिराज किन्तु इस घरमें तो सब बासी भोजन खाते हैं॥

और यही फिक्र नित रहती है देखिये यह कब तक खायेंगे।
ये जमा किये कलके टुकड़े कबतलक काम में आयेंगे॥
सुन कर नारी के बचन ऋषि हुए बेताब (व्यग्र)॥
प्रत्युत्तर में इस तरह कहने लगे शिताब (जल्दी)।
हे माता तेरी उमर है क्या और पति तेरा के साल का है॥
और सास श्वसुर की भी तेरे बतलादे तू आयु क्या है।
तेरी बातों के सुनने से मेरे मनको अति कष्ट हुआ।
अब भोजन नहीं करूंगा मैं बातों से ही सन्तुष्ट हुआ॥

मृगनयनी इस बचन पर यों बोली तत्काल।
मुनीराज मेरी उमर है अब बारह साल॥

है पति के मेरे सात साल और सास को चौथा साल लगा।
पर नहीं ऋषि जी इस जगमें अभी श्वसुर का मेरे जन्म हुआ॥
यह सुनते ही नारी के बचन चलदिये ब्रह्मचारी फौरन।
वह देवी भी फिर उसी तरह भोजन के कार्य में हुई मगन॥

श्रोतागण अब कीजिये श्रवण बाद का हाल।
सेठ भी घर पर आगए गले दुपट्टा डाल॥
द्वार के बाहर रोककर अपनी नितकी चाल।
उन्होंने कानों से सुना अपने वह अहवाल॥

इन बातों के सुनते सुनते सीने में क्रोध उभर आया।
दोनों आंखों में लाला की फौरन ही खून उतर आया॥
बिकराल हुई सूरत उनकी और लाल लाल दोनों आंखें।
जैसे शिकार पर होती है नाहर की अति कराल आंखें॥

पुत्रवधू से सेठ जी यों बोले तत्काल।
तेरी बातों से हुआ मुझको बहुत मलाल॥

ऐ दुष्टा ऐ कुटिला नारी क्यों झूठ वृथा तूने बोला।
कब बासी भोजन किया बता अमृत में विष कैसे घोला?
जब मेरा जन्म ही नहीं हुआ तब तू यहां तक कैसे आई।
और चार साल की सास तेरी ओहो यह तेरी कुटिलाई॥
तू पुत्र से मेरे बड़ी हुई यह झूठ कहा किसलिये बता।
यह वज्र समान तेरी बातें सुन कर मेरा फट गया हिया॥
मैं सत्तर वर्ष का बैठा हूं जो तूने कहा पैदा न हुआ।
पचास साल की सास तेरी तू कहे है चौथा साल लगा॥
तू पति से अपने बड़ी हुई जो सात वर्ष का बतलाया।
और अपनी आयु बारह साल क्या नशा कोई तूने खाया॥

पुत्रवधू निज श्वसुर से यों बोली कर जोर।
पिता शान्त कर चित्त को देखो मेरी ओर॥

हे पिता जी मेरी बातों में गर झूठ का लेशमात्र भी हो।
तो खड्ग से मेरी जिह्वा को बल्के गर्दन को उड़वादो॥
स्थान तलक उस साधु के हे पिता आप कृपा कीजे।
साधू से अर्थ इन बातों का सुन कर सन्देह मिटा लीजे॥

पुत्रवधू को सेठ जी लेकर अपने साथ।
योगीराज के सामने आय नवाया माथ॥

साधु भी अन्तर्यामी थे सब समझ गये शंका मनकी।
ऐसे ही सच्चे यती सती शंका हरते हैं दुर्जन की॥
जो नाहर को भी युक्ति से सीधे रस्ते पर ले आवें।
जो दुर्जन को भी प्रीति से अपने सतमार्ग पर लावें॥
ऐसे महात्मा अगर मिलें तो भाग्य उदय हो जाता है।
इस पारस पथरी से मिल कर लोहा कञ्चन बन जाता है॥

वही ऋषि वोही मुनि वही हैं सच्चे साध (साधु)।
जो क्षण भर में भक्त के हरें कोटि अपराध॥
सेठ न करने पाये थे अपना कोई सवाल।
ऋषिराज देने लगे यों उत्तर तत्काल॥
सुनो सेठ जी चितको करके अपने शान्त।
मेरी और इस युवती को बातों का वृत्तान्त॥

इसने हम से यों पूछा था तुम इतनी जल्दी क्यों आये।
था तात्पर्य इस बात का यह क्यों जल्दी कपड़े रंगवाये॥
यह सवाल इसने हम से किया है अभी तुम्हारा बालकपन।
फिर ऐसी बाल अवस्था में साधु बनने का क्या कारण॥
तब इसको उत्तर हमने दिया है काल की अद्भुत गति माता।
जो समय हाथ से निकल गया वह नहीं किसी सूरत आता॥
इस लिये जगत् में हे माता जो करना हो सो आज ही कर।
क्या बाल अवस्था युवा जरा इन बातों पर कुछ ध्यान न धर॥
और इसने कहा इस घर में तो सब बासी टुकड़े खाते हैं।
मतलब यह था सब पिछले शुभ कर्मों के फल पाते हैं॥
सब पूर्व जन्म का दिया किया इस जन्म में प्राणी पाता है।
जो आगे को नहीं करता है वह फिर पीछे पछताता है॥
और इसने उमर बतलाई वह भी हम तुम्हें सुनाते हैं।
जिसमें तुमको शंका आयी वह सब सन्देह मिटाते हैं॥
यह बारह वर्ष से लगी हुई है नियम धर्म और आतम में।
और चार साल से सास का मन है लगा हुआ परमातम में॥
और सात वर्ष से ही इसके स्वामी को आतम ज्ञान हुआ।
पर एक तूही सारे घर में ऐ मूरख शिला समानहुआ॥

तेरा है ज्ञान से शून्य हृदय इसलिये नहीं जन्मा है तू।
जिस समय से जिसको ज्ञान हुआ उतनी ही है उसकी आयु॥

सुन कर साधु के वचन हुआ सेठ को ज्ञान।
उत्तर में कहने लगे सुनिये कृपा निधान॥

हे नाथ जिस तरह रोगी का सब रोग दवा से जाता है।
जिस तरह सूरज की किरणों से सब अन्धकार मिट जाता है॥
जिस तरह से दीपक का प्रकाश घर को रोशन कर देता है।
जिस तरह भाग्य वाला कोई धन से घरको भर देता है॥
इस तरह आपके वचनों से भगवन् मेरा कल्याण हुआ।
सब काम क्रोध मद लोभ छुटे और मुझको आतम ज्ञान हुआ॥
अब मैं इन सब विभूतियों को सच्चे मनसे धिक्कारता हूं।
अब उदय अस्त के राज को भी घृणा से ठोकर मारता हूं॥
अब मेरा बेड़ा पार हुआ भगवन! इन चरणों को छूकर।
क्या खबर थी कैसी गति होती मैं बनता शूकर वा कूकर॥
काषाय वस्त्र अब स्वामी जी मुझको भी शीघ्र पहिना दीजे।
जो रंग है तुम पर चढ़ा हुआ मुझपर भी वही चढ़ा दीजे॥

योगिराज महाराज ने दिये वस्त्र काषाय।
रहे सेठ मुनिराज संग बन में अति हर्षाय॥

भक्ति प्रेस में मिलने वाली पुस्तकें ।

वेदोपनिषद्

यह ईश, केन, कठ और माण्डूक्य आदि उपनिषदों का उत्तम संग्रह है । अर्थ हिन्दी भाषा में दिया है सो भी अत्यन्त सरल । आत्मा को सच्ची शान्ति देने वाली इस अनमोल पुस्तक की न्यौछावर केवल ।-) मात्र है ।

ज्ञान धर्मोपदेश ।

सागर गागर में भरदिया गया है । इसमें वेद वेदान्त की रहस्यमयी उत्तम कविताएं तथा लेख संग्रहीत हैं । मूल्य केवल -)॥।

अष्टोत्तरशतमन्त्रमाला

यह गीता और उपनिषदों के चुने हुए १०८ उत्तम मन्त्रों की माला है । अर्थ हिंन्दी में है । यह माला अवश्य संसार से पार करने में सुदक्ष है । न्यौछावर -)

सत्य शब्द संग्रह

१४ वां संस्करण

इसमें भक्ति ज्ञान व वेदान्त की उत्तम सन्त वाणियों का संग्रह है। अच्छी २ बहर के लगभग आठसौ पद क्रम से हैं, जैसे प्रथम कबीर जी के फिर सूरदास जी, तुलसीदास जी, मीरांजी, नानक जी, आदि २ के गवैयों व मुमुक्षुओं के लिये अनमोल रत्न है। कागज, छपाई बढिया है। पृष्ठ संख्या ५५०, तिसपर भी मूल्य लागत मात्र ॥=) है।

श्रीमद्भगवद्गीता।

मूल, अन्वय, पर्य्याय और सरल भाषा में अर्थ, यह सब क्रमशः इसमें है। गीता के परिचय देने की जरूरत ही क्या है। इतना अवश्य है कि इस टीका को किसी मत-मतान्तर के पचड़े में न डाल कर शुद्ध रक्खा गया है,

कागज, छपाई सफाई बढ़िया, पृष्ठ-संख्या ४२८ फिर भी प्रचारार्थ न्यौछावर केवल ॥=)

भाषाफक्किका प्रकाश ।

संस्कृत के वैय्याकरण जानते हैं कि भट्टोजी दीक्षित की 'सिद्धान्त कौमुदी' की फक्किकाएं कितनी गम्भीर अतएव क्लिष्ट तथा दुर्बोध हैं । संस्कृत व्याकरण को सुगम बनाने के लिए इन्हीं फक्किकाओं को हिन्दी भाषा में, बड़े सुन्दर ढंग में, गुरु शिष्य के प्रश्नोत्तरों के रूप में समझाया गया है । संस्कृत के विद्यार्थियों और साधारणतः पण्डितों के बड़े काम की है । मूल्य केवल ।)

सार संग्रह ।

५ वां संस्करण

इसमें भी सार गर्भित, उपदेश पूर्ण, ज्ञान गुम्फित और भाव भरित कमनीय दिव्य कविताओं और सन्त वाणियों का सञ्चय है । संग्रह कैसा कुछ बन पड़ा है,

सो इसके नाम से ही देखलो, सब का सार है। अन्त में महात्माओं के वाक्य भी संग्रह कर दिये हैं। मूल्य ।)

शब्द सदाचार संग्रह।

३ रा संस्करण

इसमें सन्त महात्माओं की उत्तम वाणियों का संग्रह है, अन्त में सदाचार सम्बन्धी अमूल्य उपदेश हैं मू०=)

भक्ति ज्ञान योग संग्रह।

पुस्तक का विषय पुस्तक के नामसे ही स्पष्ट है। इसमें पाँचों देवताओं की स्तुति है, पश्चात् भक्ति, ज्ञान और योग की भली प्रकार से मीमाँसा की गई है मूल्य केवल =)॥

भगवत् गीता दशम अध्याय पर्यन्त।

इसमें मोटे अक्षरों में मूल, पश्चात् सरल अन्वय और भाषा में सरल शब्दार्थ है। मूल्य ।-)

शब्द संग्रह।

इसमें सन्तों की उत्तम वाणियों का संग्रह है। पुस्तक संग्रह करने योग्य है। मूल्य -)॥

गुटका

५ वां संस्करण

यह जेबी गुटका हरेक भजनी के कामकी चीज है। निर्गुण व सगुण दोनों प्रकार के रसीले भजनों का निराला संग्रह है। छपाई सफाई मोहक है। पेज संख्या १५० भेट केवल ≈) मात्र है।

शब्द सार संग्रह।

इसमें भी सन्त वाणियों का अत्युत्तम संग्रह किया गया है, अक्षर मोटे हैं, छपाई बहुत सुन्दर है। मूल्य ⁄)।

भक्ति चिन्तामणि

(ले० श्री स्वामी भोले बाबा जी)

इस मनोहर चिन्तामणि में भक्त व महात्माओं के जीवन चरित्र तथा उनके उपदेश संगृहीत हैं। यह पुस्तक प्रत्येक मनुष्य के लिये कीमती रत्न है। इसके पढने से हृदय में उच्चभाव जागृत होते हैं। ईश्वर में अनुराग

बढता है। एकबार जरूर देखें। केवल ।≡) ही कीमत है। कागज, छपाई, साइज लाजवाब है, पृष्ट सख्या २६० है।

मनुस्मृतिसार।

इसमें मनुस्मृति के बारह अध्यायों में से तत्व निचोड़ कर छाप दिया है जोकि प्रत्येक आदमी के लिये आवश्यक है। इस पुस्तक के पढ़ने पर मनुस्मृति का सारा ज्ञान आसक्ता है। समास रूप से यह उपयोगी भाग बड़ा उत्तम छापा गया है। कागज बढ़िया, सुन्दर छपाई पृष्ठ संख्या १०८ होने पर भी न्योछावर मात्र ≡)।

भगवद्भक्तांक।

यह भक्ति के तीसरे वर्ष का विशेषांक वास्तव में संग्रह करने योग्य है। इसमें देश के धुरन्धर विद्वानों सन्त महात्माओं के सुन्दर लेख हैं, भागवतों के ललित भाषा में चरित्र हैं। तथा तिरंगे और सादा चित्रों से सुसज्जित है। छपाई, सफाई तथा कागज अत्युत्तम लगाया गया है।

इस उपहार देने योग्य अत्युत्तम पुस्तक का मूल्य केवल ॥=) है।

भगवदंक।

यह भक्ति के चौथे वर्ष का विशेषांक है। यह भी अपूर्व पुस्तक है। इसके पढ़ने से ज्ञान का ज्ञान, सत्संग का सत्संग, भगवत के गुणों का स्मरण तथा उनके दशों अवतारों और प्रधान २ भागवतों के सुन्दर चित्रों में दर्शन होते हैं। छपाई सफाई बहुत सुन्दर हुई है तथा ६ तिरंगे और ७ सादे सुन्दर चित्रों से युक्त है। पृष्ठ संख्या १२८, तिसपर भी मूल्य केवल ॥।) मात्र।

गोअंक।

यह १५४ पृष्ठ तथा २४ रंगीन और सादा चित्रों का बहुत ही सुन्दर अंक है। इसमें गौ का क्या महत्व है, उसकी रक्षा व उन्नति के क्या क्या उपाय हैं, गोरक्षा के कार्य को किस भान्ति किया जावे। विदेश की डेयरी

आश्रम के उद्देश्य

१. श्री भगवान् की भक्ति का प्रचार करना।

२. गोरक्षा और उसके लिये गोचर भूमि छुड़वाना।

३. जंगलों में वृक्ष लगवाना और उसके बीच में जलाशय बनवाना।

४. शिक्षा का प्रचार करना जिसमें मनुष्य मात्र विद्या लाभ कर सकें और प्राचीन प्रथा को फिर प्रचलित करना।

५. बीमारियों के अवसर पर दवाई बांटना।

६. आस पास के ग्रामों में परस्पर के झगड़े और वैमनस्य मिटा कर शान्ति और प्रेम बढ़ाना।

७. सब संस्थाओं में भगवद्भक्ति और धर्म का भाव जाग्रत करना।

८. राजा और प्रजा सब ही का हित चिन्तन करना।

मुद्रकः-भूमानन्द ब्रह्मचारी "भक्ति प्रेस"
श्रीभगवद्भक्ति आश्रम रामपुरा रेवाड़ी।